वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 235
ISBN 978-93-82071-24-2

भगवान महावीर चालीसा

–संकलनकर्त्री–

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

– प्रकाशक –

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.
फोन नं.- (01233) 280184, 280994
Website : www.jambudweep.org
E-mail : jambudweeptirth@gmail.com

सातवाँ संस्करण	वी. नि. सं. 2538	मूल्य
5500 प्रतियाँ	आश्विन शुक्ला पूर्णिमा	16/-रु.

29 अक्टूबर 2012, शरदपूर्णिमा

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएं भी प्रकाशित होती रहती हैं।

–: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :–
गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

–: मार्गदर्शन :–
प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

–: निर्देशक एवं सम्पादक :–
कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी

–: प्रबंध सम्पादक :–
जीवन प्रकाश जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

कम्पोजिंग-ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

सम्पादकीय

-कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी

जैनधर्म के अंतिम चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी हैं जिनके शासनकाल में हम और आप सभी जीवनयापन कर रहे हैं।

यह हमारा परम सौभाग्य है कि हमें इस कलिकाल में भी पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी जैसी महान साध्वी के दर्शनों का पुण्य अवसर प्राप्त हो रहा है जिन्होंने दीर्घकालीन तपस्या एवं अपरिमित ज्ञान के बल पर एक नया कीर्तिमान स्थापित किया है, उन पूज्य माताजी की सुशिष्या प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी, जो कि अनेक पूजा-विधानों, भजनों आदि की रचयित्री होने के साथ-साथ षट्खण्डागम जैसे महान ग्रंथराज की हिन्दी टीकाकर्त्री भी हैं, उनके द्वारा इस महावीर चालीसा पुस्तक का सृजन किया गया है।

देखने में यह पुस्तक छोटी अवश्य है परन्तु लघुकाय होते हुए भी यह जन-जन के लिए अत्यन्त उपयोगी है क्योंकि इस पुस्तक में पूज्य प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी ने णमोकार मंत्र आदि अनेक प्रकार के चालीसा, सम्मेदशिखर टोंक वंदना आदि अनेक तीर्थों की वंदना एवं अन्य उपयोगी रचनाओं को संकलित किया है जिसके माध्यम से भगवान एवं तीर्थ की भक्ति करके आप महान पुण्य का संचय करें, यही मंगलकामना है।

आद्य वक्तव्य

जिस प्रकार दूध में घी, बीज में वृक्ष, तिल में तेल शक्तिरूप में विद्यमान है, उसी प्रकार से प्रत्येक प्राणी की आत्मा में शक्तिरूप से भगवान परमात्मा विद्यमान है। अब यह प्रश्न उठता है कि दूध में से घी निकालने की, बीज से वृक्ष उगाने की एवं तिल में से तेल निकालने की प्रक्रिया तो सारी दुनिया जानती है परन्तु आत्मा को परमात्मा बनाने की प्रक्रिया क्या है?

इसके लिए सर्वप्रथम हमें यह देखना है कि प्रातःकाल से लेकर सायंकाल तक हमारी दिनचर्या क्या है? क्योंकि क्रम-क्रम से ही हम उच्चता को प्राप्त करने में सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

कोई भी माता-पिता यह नहीं सोचते हैं कि अभी बच्चे को न पढ़ाएं, जब बड़ा हो जाएगा, तब सीधा बी.ए., एम.ए. करा देंगे, यहाँ बात उम्र की नहीं होती, बात होती है क्रम-क्रम से प्राप्त ज्ञान की। जब बच्चा प्रारम्भिक कक्षाओं को क्रम-क्रम से पार करेगा तभी वह एक दिन बी.ए., एम.ए. की कक्षाओं को भी आसानी से पार कर सकेगा। ठीक उसी प्रकार अब कोई सोचे कि बुढ़ापे में सीधे दीक्षा ही ले लेंगे, अभी से धर्म-ध्यान करके क्या करें? उनका यह सोचना उचित नहीं है, जब तक वे प्रारंभ से ही धर्म की परिभाषा को

नहीं समझेंगे, तब तक वे वृद्धावस्था में धर्म को कैसे स्वीकार कर पाएंगे? अतः प्रारम्भ से बच्चों को धार्मिक संस्कारों से संस्कारित करना नितान्त आवश्यक है, इसकी जिम्मेदारी प्रत्येक माता-पिता को समझनी चाहिए। बल्कि जहाँ तक मैं समझती हूँ कि पिता से अधिक इसकी जिम्मेदारी माँ पर होती है क्योंकि बच्चे का अधिकतर समय माँ की समीपता में ही गुजरता है अतः प्रातःकाल से माँ बच्चों के साथ कैसा व्यवहार करे? उन्हें सोते से जगाने की भी अनेक प्रक्रिया होती हैं जैसे कोई माँ तो प्यार से कहती है–बेटा! जल्दी उठो, स्कूल जाने का समय हो रहा है। कोई माँ गुस्से में चिल्लाती है–अरे उठ! क्या तुझे आज स्कूल नहीं जाना है क्या?

इस विषय में पूज्य श्री ज्ञानमती माताजी का कहना है कि प्रातःकाल बच्चों को गीत, उषावंदना की पंक्तियाँ पढ़कर जगाने से उनका दिवस मंगलमयी बनता है–

उठो भव्य! खिल रही है उषा, तीर्थ वंदना स्तवन करो।
आर्तरौद्र दुर्ध्यान छोड़कर, श्री जिनवर का ध्यान करो।।

इसीलिए पुस्तक में सर्वप्रथम उषावन्दना दी गई है चूँकि प्रातःकाल ज्यादा समय नहीं रहता है अतः लघु उषावन्दना पढ़ें।

इसके बाद प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी द्वारा रचित भगवान महावीर चालीसा, सम्मेदशिखर चालीसा, णमोकार चालीसा, सरस्वती चालीसा आदि हैं तथा इसी पुस्तक में सम्मेदशिखर टोंक वंदना, भगवान ऋषभदेव चालीसा, प्रयाग तीर्थ वंदना, नवग्रहशांति स्तोत्र आदि सरल पाठ हैं जिन्हें आप बच्चों को सुनाएँ तथा जो बच्चे पढ़ सकते हैं उन्हें भी अपने साथ पढ़ने की प्रेरणा दें।

इस प्रकार आपके हाथ में ही आपके बच्चे का भविष्य सुरक्षित है इस बात को ध्यान में रखते हुए प्रारंभ से ही बच्चों को सुसंस्कारित करें।

इसके अतिरिक्त पुस्तक में जितनी भी रचनाएँ हैं वे सारी की सारी अपने आप में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। जैसे– ऋषिमण्डल स्तोत्र को पढ़ने से सभी प्रकार की बाह्य बाधाओं का नाश होता है, शांति भक्ति का पाठ मन को शांति प्रदान करता है तथा जिनके नेत्रों में कुछ भी विकार है वे एक कटोरी में जल सामने रखकर दिन में 16 बार-ऐसे 16 दिन तक इस शांति भक्ति का पाठ करके उस जल से अपने नेत्रों का प्रक्षाल करें, उन्हें नेत्ररोग में अवश्य लाभ होगा। नवग्रहशांति स्तोत्र पढ़ने से ग्रहों की बाधा दूर हो जाती है, सम्मेदशिखर

वंदना, पावापुरी वंदना, कुण्डलपुर वंदना, जम्बूद्वीप तीर्थ वंदना, अहिच्छत्र तीर्थ वंदना आदि पढ़कर आप घर बैठे ही उन तीर्थों की यात्रा का आनन्द प्राप्त करते हुए असीम पुण्य का बंध कर सकते हैं।

साथ ही श्री शैल चालीसा पढ़कर अपने तन-मन की शक्ति वृद्धिंगत होने की भावना करें। वैराग्य अष्टक एवं नवोदित भावना का पाठ करके अपने वैराग्य को दृढ़ करें, 'सीता की अग्नि परीक्षा' इस काव्य कथानक को पढ़कर सीता जी के समान सहनशीलता अपने जीवन में अपनाने की भावना करें तथा अंत में गणिनी ज्ञानमती बारहमासा का पाठ करके पूज्य माताजी के आदर्शमयी जीवन से परिचित हों।

इस प्रकार प्रस्तुत पुस्तक के माध्यम से आप अपनी दिनचर्या को धर्ममयी बनाएं, यही इसकी सार्थकता है।

-ब्र.(कु.) सारिका जैन (संघस्थ)

प्रथम पट्टाचार्य श्री वीरसागर महाराज वर्ष सन् 2011-2012 के अन्तर्गत प्रकाशित

विषय-सूची

क्र.स.	विषय	पृष्ठ नं.
1.	उषा वंदना (लघु)	9
2.	भगवान महावीर चालीसा	10
3.	णमोकार चालीसा	16
4.	भगवान ऋषभदेव चालीसा	20
5.	सम्मेदशिखर चालीसा	23
6.	श्री शैल चालीसा	27
7.	सरस्वती चालीसा	31
8.	तीर्थंकरत्रय चालीसा	35
9.	तीर्थंकर जन्मभूमि तीर्थ वंदना	39
10.	प्रयाग तीर्थ वंदना	42
11.	जम्बूद्वीप तीर्थ वंदना	46
12.	अहिच्छत्र तीर्थ वंदना	52
13.	कुण्डलपुर तीर्थ वंदना	56
14.	पावापुरी सिद्धक्षेत्र वंदना	61
15.	सम्मेदशिखर टोंक वंदना	64
16.	महामृत्युंजय स्तोत्र	69
17.	नवग्रहशांति स्तोत्र (हिन्दी)	74
18.	ऋषिमण्डल स्तोत्र (हिन्दी)	77
19.	शान्ति भक्ति (हिन्दी)	88
20.	वैराग्य अष्टक	92
21.	नवोदित भावना	94
22.	सीता की अग्नि परीक्षा	97
23.	गणिनी ज्ञानमती बारहमासा	105
24.	मंगल आरती	111-112

उषा वंदना (लघु)

रचयित्री–गणिनी आर्यिका ज्ञानमती

उठो भव्य! खिल रही है उषा, तीर्थ वंदना स्तवन करो।
आर्तरौद्र दुर्ध्यान छोड़कर, श्री जिनवर का ध्यान करो।।1।।

अष्टापद से ऋषभदेव जिन, वासुपूज्य चम्पापुर से।
ऊर्जयन्त से श्री नेमीश्वर, मुक्ति गये वंदों रुचि से।।2।।

पावापुरी सरोवर से इस, उषा काल में श्री महावीर।
विधुत क्लेश निर्वाण गये हैं, नमो उन्हें झट हो भवतीर।।3।।

बीस जिनेश्वर मोक्ष गये हैं, श्री सम्मेद शिखर गिरिसे।
और असंख्य साधुगण भी, शिव गये उन्हें वंदों रुचि से।।4।।

जिनवर गणधर मुनिगण की, निर्वाण भूमियाँ सदा नमो।
पंचकल्याणक भूमि तथा, अतिशययुत क्षेत्र सभी प्रणमो।।5।

शालिपिष्ट भी शर्करयुत, माधुर्य स्वादकारी जैसे।
पुण्य पुरुष के पद रज से ही, धरा पवित्र हुई वैसे।।6।।

त्रिभुवन के मस्तक पर सिद्ध-शिला पर सिद्ध अनंतानंत।
नमो नमो त्रिभुवन के सभी, तीर्थ को जिससे हो भव अंत।।7।।

तीर्थक्षेत्र वंदन से नंतानंत, जन्म कृत पाप हरो।
सम्यक् "ज्ञानमती" श्रद्धा से, शीघ्र सिद्ध सुख प्राप्त करो।।8।

भगवान महावीर चालीसा

दोहा

सिद्धिप्रिया के नाथ हैं, महावीर भगवान।
सिद्धारथ सुत वीर को, मेरा कोटि प्रणाम।।1।।
वर्धमान अतिवीर प्रभु, सन्मति हैं सुखकार।
पाँच नाम युत वीर को, वन्दन बारम्बार।।2।।
चालीसा महावीर का, पढ़ो भव्य मन लाय।
रोग शोक संकट टलें, सुख सम्पति मिल जाय।।3।।

चौपाई

जय जय श्री महावीर हितंकर।
जय हो चौबिसवें तीर्थंकर।।1।।
जय प्रभु तुम जग में क्षेमंकर।
जय जय नाथ तुम्हीं शिवशंकर ।।2।।
जन्म लिया प्रभु कुण्डलपुर में।
चैत्र सुदी तेरस शुभ तिथि में।।3।।
त्रिशला माता धन्य हो गईं।
अपने सुत में मग्न हो गईं।।4।।

राजा सिद्धारथ हरषाये।
पुत्र जन्म पर दान बंटाये।।5।।
स्वर्गों में भी खुशियाँ छाईं।
इन्द्रों की टोली वहाँ आई।।6।।
नंद्यावर्त महल में जाकर।
सिद्धारथ से आज्ञा पाकर।।7।।
पहुँची शची प्रसूती गृह में।
माता की त्रय प्रदक्षिणा दे।।8।।
त्रिशला माँ का वन्दन करके।
उनको निद्रा सम्मुख करके।।9।।
मायामय बालक को सुलाया।
गोद में जिनबालक को उठाया।।10।।
तत्क्षण स्त्रीलिंग विनाशा।
शिवपद की मन में अभिलाषा।।11।।
जिन शिशु को बाहर लाकर के।
दिया इन्द्र के करकमलों में।।12।।
इन्द्र प्रभू को ले अति हरषा।
हर्षाश्रू की हो गई वर्षा।।13।।

दो नेत्रों से देख न पाया।
नेत्र सहस्र तब उसने बनाया।।14।।
निरखा अंग अंग जिनवर का।
फिर भी उसका मन नहिं भरता।।15।।
मेरु सुदर्शन पर ले जाकर।
किया जन्म अभिषेक प्रभू पर।।16।।
उस जन्मोत्सव का क्या कहना।
तीन लोक में उसकी महिमा।।17।।
इन्द्र ने नामकरण किया प्रभु का।
वीर व वर्धमान पद उनका।।18।।
जन्म न्हवन के बाद शची ने।
प्रभु को किया सुसज्जित उसने।।19।।
फिर कुण्डलपुर नगरी आकर।
मात-पिता को सौंपा बालक।।20।।
वहाँ पुनः जन्मोत्सव करके।
नृत्य किया था कुण्डलपुर में।।21।।
पलना खूब झुलाया प्रभु का।
नंद्यावर्त महल परिसर था।।22।।

एक बार दो मुनिवर आये।
जिनशिशु को लख अति हर्षाये।।23।।
दूर हुई उनकी मनशंका।
"सन्मति" नाम उन्होंने रक्खा।।24।।
बालपने में क्रीड़ा करते।
मात-पिता के मन को हरते।।25।।
संगमदेव एक दिन आया।
उसने सर्प का वेष बनाया।।26।।
वर्धमान तब खेल रहे थे।
देवबालकों के संग वन में।।27।।
उनके बल की हुई परीक्षा।
सर्प देव की थी यह इच्छा।।28।।
चढ़े सर्प के फण पर वे तो।
मानो माँ की गोदी में हों।।29।।
सर्प ने देवरूप प्रगटाया।
"महावीर" कह शीश झुकाया।।30।।
बालपने से यौवन पाया।
लेकिन ब्याह नहीं रचवाया।।31।।

जातिस्मरण हुआ जब उनको।
दीक्षा लेने चल दिये वन को।।32।।
बारह वर्ष कठिन तप करके।
केवलज्ञान प्रगट हुआ उनके।।33।।
प्रथम देशना विपुलाचल पर।
प्रगटी शिष्य मिले जब गणधर।।34।।
तीस वर्ष तक समवसरण में।
दिव्य देशना दी जिनवर ने।।35।।
पावापुर से मोक्ष पधारे।
तीर्थंकर महावीर हमारे।।36।।
सबने दीपावली मनाई।
तब से ही दीवाली आई।।37।।
चला वीर संवत्सर जग में।
सर्वाधिक प्राचीन सुखद है।।38।।
कार्तिक शुक्ला एकम तिथि से।
प्रारंभ होता नया वर्ष है।।39।।
महावीर की जय सब बोलो।
आत्मा के सब कल्मष धो लो।।40।।

शंभु छन्द

प्रभु महावीर का चालीसा, जो चालिस दिन तक पढ़ते हैं।
उनकी स्मृति में दीवाली के, दिन दीपोत्सव करते हैं।।
विघ्नों का शीघ्र विलय होकर, उनको मनवाञ्छित फल मिलता।
लौकिक वैभव के साथ साथ, आध्यात्मिक सौख्यकमल खिलता।।1।।

पच्चिस सौ उनतिस वीर संवत्, शुभ ज्येष्ठ कृष्ण मावस तिथि में।
रच दिया ज्ञानमति गणिनी की, शिष्या "चन्दनामती" मैंने।।
पावापुर में जलमंदिर का, दर्शन कर मन अति हर्षित है।
प्रभु महावीर के चरणों में, मेरी यह कृती समर्पित है।।2।।

रत्नत्रय की हो वृद्धि प्रभो, बोधी समाधि की प्राप्ती हो।
नश्वर इस मानव तन द्वारा, अविनश्वर पद की प्राप्ती हो।।
उससे पहले प्रभु आर्त रौद्र, ध्यानों की सहज समाप्ती हो।
मैं धर्मध्यान में रम जाऊँ, तब ही सच्ची सुख शांती हो।।3।।

णमोकार चालीसा

दोहा

वंदूँ श्री अरिहंत पद, सिद्ध नाम सुखकार।
सूरी पाठक साधुगण, हैं जग के आधार।।1।।

इन पाँचों परमेष्ठि से, सहित मूल यह मंत्र।
अपराजित व अनादि है, णमोकार शुभ मंत्र।।2।।

णमोकार महामंत्र को, नमन करूँ शतबार।
चालीसा पढ़कर लहूँ, स्वात्मधाम साकार।।3।।

चौपाई

हो जैवन्त अनादिमंत्रम्, णमोकार अपराजित मंत्रम् ।।1।।
पंच पदों से युक्त सुयंत्रम्, सर्वमनोरथ सिद्धि सुतंत्रम्।।2।।
पैंतिस अक्षर माने इसमें, अड़ावन मात्राएँ भी हैं।।3।।
अतिशयकारी मंत्र जगत में, सब मंगल में कहा प्रथम है।।4।।
जिसने इसका ध्यान लगाया, मनमन्दिर में इसे बिठाया।।5।।
उसका बेड़ा पार हो गया, भवदधि से उद्धार हो गया।।6।।

अंजन बना निरन्जन क्षण में, शूली बदली सिंहासन में।।7।।
नाग बना फूलों की माला, हो गई शीतल अग्नीज्वाला।।8।।
जीवन्धर से इसी मंत्र को, सुना श्वान ने मरणासन्न हो।।9।।
शांतभाव से काया तजकर, पाया पद यक्षेन्द्र हुआ तब।।10।।
एक बैल ने मंत्र सुना था, राजघराने में जन्मा था।।11।।
जातिस्मरण हुआ जब उसको, उसने खोजा उपकारी को।।12।।
पद्मरुची को गले लगाया, आगे मैत्री भाव निभाया।।13।।
कालान्तर में वही पद्मरुचि, राम बने तब बहुत धर्मरुचि।।14।।
बैल बना सुग्रीव बन्धुवर! दोनों के सम्बन्ध मित्रवर।।15।।
रामायण की सत्य कथा है, णमोकार से मिटी व्यथा है।।16।।
ऐसी ही कितनी घटनाएँ, नए पुराने ग्रन्थ बताएँ।।17।।
इसीलिए इस मंत्र की महिमा, कही सभी ने इसकी गरिमा।।18।।
हो अपवित्र पवित्र दशा में, सदा करें संस्मरण हृदय में।।19।।
जपें शुद्धतन से जो माला, वे पाते हैं सौख्य निराला।।20।।
अन्तर्मन पावन होता है, बाहर का अघमल धोता है।।21।।
णमोकार के पैंतिस व्रत हैं, श्रावक करते श्रद्धायुत हैं।।22।।

हर घर के दरवाजे पर तुम, महामंत्र को लिखो जैनगण।।23।।
जैनी संस्कृति दर्शाएगा, सुख समृद्धि भी दिलवाएगा।।24।।
एक तराजू के पलड़े पर, सारे गुण भी रख देने पर।।25।।
दूजा पलड़ा मंत्र सहित जो, उठा न पाए कोई उसको।।26।।
उठते चलते सभी क्षणों में, जंगल पर्वत या महलों में।।27।।
महामंत्र को कभी न छोड़ो, सदा इसी से नाता जोड़ो।।28।।
देखो! इक सुभौम चक्री था, उसने मन में इसे जपा था।।29।।
देव मार नहिं पाया उसको, तब छल युक्ति बताई नृप को।।30।।
उसके चंगुल में फंस करके, लिखा मंत्र राजा ने जल में।।31।।
ज्यों ही उस पर कदम रख दिया, देव की शक्ती प्रगट कर दिया।।32।।
देव ने उसको मार गिराया, नरक धरा को नृप ने पाया।।33।।
मंत्र का यह अपमान कथानक, सचमुच ही है हृदय विदारक।।34।।
भावों से भी न अविनय करना, सदा मंत्र पर श्रद्धा करना।।35।।
इसके लेखन में भी फल है, हाथ नेत्र हो जाएं सफल है।।36।।
णमोकार की बैंक खुली है, ज्ञानमती प्रेरणा मिली है।।37।।
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में, मंत्रों का व्यापक संग्रह है।।38।।

इसकी किरण प्रभा से जग में, फैले सुख शांती जन-जन में।।39।।
मन-वच-तन से इसे नमन है, महामंत्र का करूं स्मरण मैं।।40।।

शंभु छंद

यह महामंत्र का चालीसा, जो चालिस दिन तक पढ़ते हैं।
ॐ अथवा असिआउसा मंत्र, या पूर्ण मंत्र जो जपते हैं।।
ॐकार मयी दिव्यध्वनि के, वे इक दिन स्वामी बनते हैं।
परमेष्ठी पद को पाकर वे, खुद णमोकारमय बनते हैं।।1।।
पच्चिस सौ बाइस वीर अब्द, आश्विन शुक्ला एकम तिथि में।
रच दिया ज्ञानमति गणिनी की, शिष्या "चन्दनामति" मैंने।।
मैं भी परमेष्ठी पद पाऊँ, प्रभु कब ऐसा दिन आएगा।
जब मेरा मन अन्तर्मन में, रमकर पावन बन जाएगा।।2।।

श्री ऋषभदेव चालीसा

–दोहा–

सिद्धप्रभू को नमन कर, सिद्ध करूँ सब काम।
अरिहन्तों के नमन से, पाऊँ आतम धाम।।1।।
पंचकल्याणक से सहित, तीर्थंकर अरिहन्त।
अष्टकर्म को नष्ट कर, बने सिद्ध भगवन्त।।2।।
उनमें ही प्रभु ऋषभ का, चालीसा सुखकार।
पढ़ो सुनो सब भव्यजन, हो जाओ भव पार।।3।।

–चौपाई–

जय हो आदिनाथ परमेश्वर, जय हो ब्रह्मा विष्णु महेश्वर।।1।।
हो जयवंत अयोध्या तीरथ, जिनवर जन्मभूमि की कीरत।।2।।
सुषमादुषमा तृतिय काल था, भोगभूमि का भी प्रयाण था।।3।।
नाभिराय अंतिम कुलकर थे, कर्मभूमि के वे कुलधर थे।।4।।
सर्वप्रथम इन्द्रों ने आकर, नाभिराय का ब्याह रचाकर।।5।।
कर्मभूमि प्रारंभ किया था, नगरी में आनन्द किया था।।6।।
शुभ विवाह की परम्परा यह, चलीतभी से इस धरती पर।।7।।
राजमहल सर्वतोभद्र था, इक्यासी खन का सुन्दर था।।8।।
नाभिराय के उसी महल में, मरुदेवी माँ के आंगन में।।9।।

रत्नवृष्टि की थी कुबेर ने, पन्द्रह महिने तक धनेश ने।।10।।
थी आषाढ़ वदी दुतिया तिथि, मरुदेवी के गर्भ बसे प्रभु।।11।।
चैत्र कृष्ण नवमी शुभ तिथि में, आदिनाथ तीर्थंकर जन्मे।।12।।
तीन लोक में शांति छा गई, अवध में नूतन क्रान्ति आ गई।।13।।
देवों के संग खेल खेलकर, बड़े हो गये ऋषभ जिनेश्वर।।14।।
स्वर्गों से ही भोजन आता, समझ नियोग दुखी नहिं माता।।15।।
यौवन में प्रभु ब्याह रचाया, यशस्वती व सुनन्दा पाया।।16।।
इक सौ एक पुत्र दो पुत्री, उनमें प्रथम भरत थे चक्री।।17।।
जिनसे भारत देश कहाया, छहः खण्डों में ध्वज लहराया।।18।।
इक दिन ऋषभदेव की सभा में, नृत्य दिखाया नीलांजना ने।।19।।
जग वैभव असार बतलाया, प्रभु के मन वैराग्य समाया।।20।।
वह भी चैत्र कृष्ण नवमी थी, जब जिनवर ने दीक्षा ली थी।।21।।
वह नगरी प्रयाग कहलाई, वटतरुतल प्रभु दीक्षा पाई।।22।।
एक वर्ष उनतालिस दिन में, प्रथम आहार हस्तिनापुर में।।23।।
सोमप्रभ श्रेयांस महल में, पंचाश्चर्य रतन बरसे थे।।24।।
अक्षय तृतिया पर्व तभी से, मना रहे सब लोग खुशी से।।25।।
एक हजार वर्ष तक तप कर, आत्मा में कैवल्य प्रगट कर।।26।।
समवसरण लक्ष्मी को पाया, जग को मोक्षमार्ग बतलाया।।27।।
वह थी फाल्गुन वदि ग्यारस तिथि, केवलज्ञान कल्याणक शुभ तिथि।।28।।

पुरिमतालपुर के उद्यान में, समवसरण में मुनि प्रधान थे।।29।।
अष्टापद गिरि पर जा करके, योग निरोध किया जिनवर ने।।30।।
माघ कृष्ण चौदस शुभ तिथि में, कर्म अघाती नष्ट किए थे।।31।।
मोक्षधाम को प्राप्त कर लिया, शिवलक्ष्मी का वरण कर लिया।।32।।
सब पुत्रों ने दीक्षा लेकर, प्राप्त किया शिवधाम हितंकर।।33।।
ब्राह्मी-सुंदरी बनीं आर्यिका, गणिनी पद की प्रथम धारिका।।34।।
यह सब है इतिहास पुराना, वर्तमान को है बतलाना।।35।।
गणिनी माता ज्ञानमती की, प्रबल प्रेरणा प्राप्त हो गई।।36।।
ऋषभदेव प्रभु का जन्मोत्सव, खूब मनाओ महामहोत्सव।।37।।
जैनधर्म प्राकृतिक बताओ, सार्वभौम सिद्धांत सुनाओ।।38।।
और नहीं मैं कुछ भी चाहूँ, जनम जनम प्रभु दर्शन पाऊँ।।39।।
मेरी आतम निधि मिल जावे, निज गुण कीर्ति ध्वजा फहराए।।40।।

–दोहा–

दुतिया कृष्ण अषाढ़ की, कृति चालीसा ख्यात।
वीर संवत पच्चीस सौ, तेइस तिथि विख्यात।।1।।
अज्ञ आर्यिका चन्दनामती रचित गुणगान।
मुझमें गुण विकसित करें, दे त्रयरत्न महान।।2।।
चालीस दिन तक जो करे, यह चालीसा पाठ।
तन मन पावन वो करे, लहे जगत का ठाठ।।3।।

सम्मेदशिखर चालीसा

दोहा

सिद्धिप्रिया की प्राप्ति हित, नमन करूँ सब सिद्ध।
क्रम से भव को काटकर, होऊँ पूर्ण समृद्ध।।1।।
सिद्धक्षेत्र शाश्वत कहा, गिरि सम्मेद महान।
जहाँ अनन्तानंत प्रभु, ने पाया शिवधाम।।2।।
सम्मेदाचल तीर्थ का, चालीसा सुखकार।
पढ़ें सुनें जो भव्यजन, क्रम से हों भव पार।।3।।

चौपाई

जय हो श्री सम्मेद शिखर की, जय हो उस शाश्वत गिरिवर की।।1।।
हों जयवन्त बीस ये जिनवर, सिद्ध बने थे जो तीर्थंकर।।2।।
इस हुण्डावसर्पिणी युग में, चार जिनेश्वर अन्य स्थल से।।3।।
मोक्ष प्राप्त कर सिद्ध बन गए, वे तीरथ भी पूज्य बन गए।।4।।
लेकिन भूत भावि कालों में, यहीं से मुक्त हुए अरु होंगे।।5।।
यही अटल सिद्धान्त नियम है, सिद्धिवधू का यह उपवन है।।6।।

कोड़ाकोड़ि मुनीश्वर आते, इस पर्वत पर ध्यान लगाते।।7।।
टोंक-टोंक से मोक्ष पधारे, घाति अघाती कर्म विडारे।।8।।
इसीलिए गिरि की रजपावन, है वहाँ का कण-कण्नभावन।।9।।
यात्रा यद्यपि बहुत कठिन है, यात्री होता फिर भी धन्य है।।10।।
थक थककर भी चढ़ जाता है, अपनी मंजिल पा जाता है।।11।।
पार्श्वनाथ की टोंक पे जाकर, प्रभु के सम्मुख शीश झुकाकर।।12।।
जन्म सफल कर लेता मानव, दूर हटें दुर्गति के दानव।।13।।
मन्दिर कई बने पर्वत पर, जिनमें इक प्रसिद्ध जलमन्दिर।।14।।
थका पथिक कुछ देर बैठकर, करता है विश्राम वहाँ पर।।15।।
फिर यात्रा पर चल देता है, यात्रा का फल वर लेता है।।16।।
पर्वत का प्राकृतिक दृश्य भी, बड़ा मनोरम सुखद सत्य ही।।17।।
सीता नाला है इक झरना, जहाँ एक क्षण सबको रुकना।।18।।
शीतल जल से पग धो लेना, यदि शक्ती वापस हो लेना।।19।।
एक ओर गन्धर्व है नाला, बहता झर-झर झरना प्यारा।।20।।
उतर-उतर कर यात्री आते, स्वल्पाहार प्रसाद को पाते।।21।।
बच्चे-बूढ़े सब लेते हैं, दान स्वरूप द्रव्य देते हैं।।22।।

एक वन्दना करके भी वे, तीन, पाँच, नौ भी कर लेवें।।23।।
शतक सहस्र वन्दना वाले, कुछ मुनि श्रावक भक्त बखाने।।24।।
उनकी काया सुदृढ़ बनी है, भावों की माया सुघनी है।।25।।
इस पर्वत की महिमा न्यारी, कही पूर्व ऋषियों ने भारी।।26।।
एक बार वन्दे जो कोई, तांहि नरक पशुगति नहिं होई।।27।।
भव्यजीव ही जा सकते हैं, पर्वत वन्दन कर सकेतहैं।।28।।
नहिं अभव्य पर्वत चढ़ सकते, शास्त्र जिनागम ऐसा कहते।।29।।
मोक्षगमन की शक्ति जहाँ है, भव्य शक्ति का वास वहाँ है।।30।।
चाहे वह कितने ही भव में, कर्मनाश कर पहुंचे शिव में।।31।।
किन्तु अभव्य न शिवपद पाते, निज अभव्य शक्ति के नाते।।32।।
ये परिणामिक भाव जीव के, होते हैं स्वयमेव जीव में।।33।।
वर्तमान में भी वह तीरथ, जिनमत की कहता है कीरत।।34।।
पर्वत के नीचे भी मंदिर, बने अनेकों अद्भुत सुन्दर।।35।।
कई धर्मशालाएं भी हैं, यात्री को सुविधाएं भी हैं।।36।।
श्रावण सुदि सप्तमि का मेला, होता है वहां खूब रंगीला।।37।।
होली पर भी मधुबन जाना, होली का देखो नजराना।।38।।

सांवरिया का नाम पुकारो, पारस का जयकार उचारो।।39।।
तुम भी पारस बन जाओगे, भक्ती का रस पा जाओगे।।40।।

शंभु छंद

चालिस दिन तक जो करे, नित चालीसहिं बार।
मिले सहस उपवास फल, सुख सम्पत्ति अपार।।1।।

गणिनी माता ज्ञानमति, बालसती विख्यात।
उनकी शिष्या चन्दनामती रचित यह पाठ।।2।।

सुगन्ध दशमी भाद्रपद, की तिथि है सुप्रसिद्ध।
वीर संवत् पच्चीस सौ, तेइस की कृति सिद्ध।।3।।

जब तक गिरि सम्मेद का, जग में रहे प्रकाश।
चालीसा यह तीर्थ का, तन मन करे विकास।।4।।

सिद्धों की उस श्रेणी में, आए मेरा नाम।
सिद्धक्षेत्र की भक्ति से, मिले मुझे शिवधाम।।5।।

श्री शैल चालीसा (हनुमान चालीसा

–दोहा–

शीश झुका कर जिनचरण, नमूँ पंचगुरुदेव।
सिद्ध अनन्तानन्तप्रम, करें भ्रमण भव छेव।।1।।

चालीसा श्रीशैल का, शक्ति प्रदायक जान।
मांगीतुंगी से मिला, जिनको पद निर्वाण।।2।।

उनका ही हनुमान यह, नाम हुआ विख्यात।
नमस्कार कर उन चरण, पाऊँ आतम ख्याति।।3।।

–चौपाई–

जय जय प्रभु श्री शैल महाना, जय बजरंगबली हनुमाना।।1।।
जय प्रभु कामदेव परधाना, वानरवंशी रूप सुहाना।।2।।
सती अंजना मात तुम्हारी, तुम सा सुत पाकर बलिहारी।।3।।
पवनञ्जय जी पिता कहाये, पाकर पुत्र बहुत हरषाये।।4।।
नव लख वर्ष पूर्व जन्मे थे, रामचन्द्र के भक्त बने थे।।5।।
जन्म से ही बलशाली इतने, पर्वत चूर हुआ गिरने से।।6।।
एक बार का है घटनाक्रम, सती अंजना का टूटा भ्रम।।7।।

जंगल में उसने सुत जन्मा, विकट परिस्थितियों का क्षण था।।8।।
तभी अंजना के मामा ने, कहा चलो तुम मेरे घर में।।9।।
दोनों को लेकर विमान में, हनुरुह द्वीप चले द्रुतगति से।।10।।
तभी बीच में पुत्र गिर गया, मातृशक्ति का भाव भर गया।।11।।
नीचे उतरा वह विमान जब, देखा बालक खेल रहा तब।।12।।
उसको चोट लगी नहिं किंचित्, पर्वत शिला चूर थी प्रत्युत् ।।13।।
खुशियों का तब पार नहीं था, क्योंकि उन्हें विश्वास नहीं था।।14।।
देख अपूरब घटना ऐसी, जय बोली वज्रांगबली की।।15।।
तुम सा सुत पाए हर माता, जो बन गया जगत का त्राता।।16।।
रामचन्द्र की रामायण के, प्रमुख पात्र बनकर चमके थे।।17।।
विद्याधर मानव की काया, समय-समय पर दिखती माया।।18।।
कभी दीर्घ-लघु काय बनाते, कार्य हेतु नभ में उड़ जाते।।19।।
राम लखन के भक्त कहाये, सीता माता के गुण गाये।।20।।
रामचन्द्र वनवास काल में, सीता के अपहरणकाल में।।21।।
जब रावण से युद्ध हुआ था, लंका में संघर्ष छिड़ा था।।22।।
शक्ति अमोघ लगी लक्ष्मण को, गये हनुमान अयोध्यापुरि को।।23।।

सती विशल्या को ले आए, संजीवनी नाम जन गाएं।।24।।
ज्यों ही पास विशल्या पहुँची, दूर हुई लक्ष्मण की शक्ती।।25।।
पुनः युद्ध में विजय हो गई, राम लखन की जीत हो गई।।26।।
सीता ने पाया निज पति को, जन्म दिया फिर सुत लवकुश को।।27।
राम भक्त का एक लक्ष्य था, राम सिवा न उन्हें कुछ प्रिय था।।28।।
थे सुग्रीव प्रधान साथ में, वानर सेना सदा साथ में।।29।।
वानर सम नहिं मुख था उनका, मात्र मुकुट में वानरचिन्ह था।।30।।
क्योंकि वंश था उनका वानर, वे थे कामदेव अति सुन्दर।।31।।
आगे चलकर रामचन्द्र जब, दीक्षा ले तप हेतु गए वन।।32।।
उनके संग हनुमान भी जा कर, दीक्षित हो पाया सुखसागर।।33।।
ग्रन्थ पुराणों में वर्णन है, तुंगीगिरि का जहाँ कथन है।।34।।
राम हनू सुग्रीव सुडीलं, गव गवाख्य नील महानीलं।।35।।
तुंगीगिरि से मोक्ष पधारे, निन्यानवे कोटि मुनि सारे।।36।।
इसीलिए हनुमान प्रभू को, माना है भगवान सभी ने।।37।।
उनकी भक्ति करे जो प्राणी, मनवांछित फल पाते ज्ञानी।।38।।
ग्रह बाधा सब भग जाती है, शारीरिक शक्ती आती है।।39।।
श्री वज्रांगबली हनुमाना, नमूँ नमूँ श्री शैल प्रधाना।।40।।

–दोहा–

वीर संवत् पच्चीस सौ, पच्चिस वर्ष महान।
प्रथम ज्येष्ठ मावसतिथी, की यह रचना जान।।1।।

ज्ञानमती मातेश्वरी, गणिनी प्रमुख महान।
उनकी शिष्या चन्दनामती आर्यिका नाम।।2।।

काय आत्म द्वय शक्ति की, वृद्धि हेतु गुणगान।
करो सभी चालीस दिन, चालीसा हनुमान।।3।।

सरस्वती मंत्र

ॐ ह्रीं श्रीं वद वद वाग्वादिनी
भगवति सरस्वती ह्रीं नमः।

सरस्वती चालीसा

रचयित्री-आर्यिका चन्दनामती

–दोहा–

तीर्थंकर मुख से खिरी, नमूँ दिव्यध्वनि सार।
द्वादशांगमय सरस्वती, को वन्दन शत बार।।1।।

बुद्धि प्रखरता के लिए, करूँ मात गुणगान।
जड़ता मेरी दूर हो, पाऊँ ऐसा ज्ञान।।2।।

चालीसा माध्यम बने, गुण वर्णन में सार्थ।
हों प्रसन्न माँ सरस्वती, मुझ मन में साकार ।।3।।

–चौपाई –

जय माँ सरस्वती जिनवाणी, जय वागीश्वरि जय कल्याणी।।1।।
शारद मात तुम्हारी जय हो, तुम जिनवर मन में अक्षय हो।।2।।
द्वादशांगमय रूप तुम्हारा, ज्ञानीजन को लगता प्यारा।।3।।
वह आध्यात्मिक ज्ञान अपूरब, ग्यारह अंग चतुर्दश पूरब।।4।।
आचारांग प्रथम कहलाता, सूत्रकृतांग द्वितीय सुहाता।।5।।

तीजा स्थानांग कहा है, समवायांग चतुर्थ रहा है।।6।।
व्याख्याप्रज्ञप्ती है पंचम, ज्ञातृकथा शुभ अंग है षष्ठम् ।।7।।
उपासकाध्ययनांग है सप्तम, अन्तःकृद्दश अंग जु अष्टम् ।।8।
नवम अनुत्तरदशांग आता, दशम प्रश्नव्याकरण कहाता।।9।।
सूत्रविपाक नाम ग्यारहवाँ, दृष्टीवाद कहा बारहवाँ।।10।।
दृष्टिवाद के पाँच भेद हैं, जिन्हें बताते जैन वेद हैं।।11।।
पहला है परिकर्म सुहाना, सूत्र पूर्वगत क्रमशः माना।।12।।
है प्रथमानुयोग फिर चौथा, पंचम भेद चूलिका होता।।13।।
चौदह भेद पूर्वगत के हैं, आगम में सार्थक वर्णे हैं।।14।।
प्रथम कहा उत्पादपूर्व है, दूजा अग्रायणी पूर्व है।।15।।
वीर्यप्रवाद पूर्व है तीजा, अस्तीनास्ति प्रवाद है चौथा।।16।।
ज्ञानप्रवाद पूर्व है पंचम, सत्यप्रवाद पूर्व है षष्ठम् ।।17।।
सप्तम पूर्व है आत्मप्रवादम्, कर्मप्रवाद पूर्व है अष्टम् ।।18।।
नवमा प्रत्याख्यान पूर्व है, पुनि विद्यानुप्रवाद पूर्व है।।19।।
पूर्व कहा कल्याणवाद है, प्राणावाय पूर्व द्वादश है।।20।।
क्रियाविशाल पूर्व तेरहवाँ, लोकबिन्दुसारम् चौदहवाँ।।21।।
ग्यारह अंग चतुर्दश पूरब, इनसे युत जिनवचन अपूरब।।22।।
वीरप्रभू की दिव्यध्वनि है, गौतम गणधर की कथनी से।।23।।

यह श्रुत प्रगट हुआ धरती पर, आचार्यों की बना धरोहर ।।24।।
परम्पराचार्यों ने पाया, भव्यों को उपदेश सुनाया।।25।।
वर्तमान के इस कलियुग में, अंगपूर्व उपलब्ध न जग में।।26।
उनके अंशरूप हैं आगम, वर्तमान के श्रुत परमागम।।27।।
षट्खण्डागम आदि ग्रंथ हैं, धवलादिक टीका से युत हैं।।28।।
उस पर नूतन संस्कृत टीका , गणिनी ज्ञानमती जी ने लिखा।।29
वर्तमान में चतुरनुयोगा, उसमें ही श्रुत गर्भित होगा।।30।।
जो भी सब उपलब्ध शास्त्र हैं, उनसे कर लो सिद्ध स्वार्थ है।।31।।
सरस्वती माँ का आराधन, करता है पापों का क्षालन।।32।।
जिनवाणी के कई नाम हैं, सरस्वती भारती धाम है।।33।।
शारद माँ तुम हंसवाहिनी, विदुषी वागीश्वरी ब्राह्मणी।।34।।
ब्रह्मचारिणी और कुमारी, कहें जगन्माता सुखकारी।।35।।
श्रुतदेवी भाषा गौ वाणी, विदुषी सर्वमता प्रभु वाणी।36।।
इन सोलह नामों युत माता, मेरे मन की हरो असाता।।37।।
अनेकान्तमय अमृत झरिणी, श्रुतज्ञान की तुम निर्झरिणी।।38।।
तुममें हो अवगाहन मेरा, हो जावे बस ज्ञान उजेरा।।39।।
यही एक अभिलाषा मेरी, मिटे ज्ञान से भव की फेरी।।40।।

–शंभु छंद –

यह श्रुत चालीसा जो भविजन, प्रतिदिन श्रद्धा से पढ़ लेंगे।
लौकिक आध्यात्मिक ज्ञान सभी, वे अपने मन में भर लेंगे।।
पच्चिस सौ चौबिस वीर संवत् की, श्रुत पंचमी तिथीआई।
''चन्दनामती'' निज भावों में, श्रुतभक्ती गंगा भर लाई।।1।।

यह ज्ञानगंग बन करके मेरे, मन को पावन कर देवे।
जग को अपनी पावनता की, सौरभता का परिचय देवे।।
निज पर की जड़ता क्षय करने का, भाव मात्र इस रचना में।
जिनदेव शास्त्र गुरु की छाया, मेरे जीवन में सदा मिले।।2।।

–दोहा –

सरस्वती माँ के चरण, में अर्पित यह पुष्प।
चालीसा के निमित्त से, करूँ भाव निज शुद्ध।।3।।

तीर्थंकरत्रय चालीसा

रचयित्री-आर्यिका चन्दनामती

–दोहा–

शांति-कुंथु-अरहनाथ को, नमन करूँ शतबार।
हस्तिनागपुर में हुए, तीनों के अवतार।।1।।

गर्भ जन्म तप ज्ञान ये, चार-चार कल्याण।
तीनों जिनवर के हुए, हस्तिनापुर में महान।।2।।

एक साथ इन तीन का, चालीसा सुखकार।
पढ़कर के त्रय पद लहूँ, पाऊँ शिव का द्वार।।3।।

–चौपाई–

जय हो शांतिनाथ जिनवर जी, सोलहवें तीर्थंकर प्रभु जी।।1।।
पंचम चक्रवर्ती पद धारी, द्वादश कामदेव सुखकारी।।2।।
विश्वसेन राजा के महल में, ऐरादेवी के आंगन में।।3।।
पन्द्रह मास रतन बरसे थे, देव-इन्द्र-नर सब हरषे थे।।4।।
भादों कृष्णा सप्तमि तिथि में, माँ ऐरा को स्वप्न दिखे थे।।5।।
सबने गर्भ कल्याण मनाया, माँ ने स्वप्नों का फल पाया।।6।।
जेठ वदी चौदस तिथि आई, तीन लोक में खुशियाँ छाईं।।7।।

सोलहवें तीर्थंकर जनमे, लाञ्छन हिरण तुम्हारे पद में।।8।।
इसी तिथी में दीक्षाधारी, छोड़ी जग की सम्पति सारी।।9।।
पौष शुक्ल दशमी को प्रभु ने, पाया केवल पद जिनवर ने।।10।।
फिर सम्मेदशिखर पर जाकर, कुंदकूट पर ध्यान लगाकर।।11।।
कर्मनाश कर शिवपद पाया, ज्येष्ठ कृष्ण चौदस दिन आया।।12।।
शांतिनाथ की महिमा भारी, शांतिमंत्र जपते नर नारी।।13।।
जय हो कुंथुनाथ तीर्थंकर, सत्रहवें जिनवर क्षेमंकर।।14।।
चक्रवर्ति छट्ठे कहलाए, कामदेव तेरहवें गाए।।15।।
सूरसेन पितु माँ श्रीकान्ता, हस्तिनापुर का राजभवन था।।16।।
गर्भ तिथी श्रावण वदि दशमी, रत्नवृष्टि धनपति ने की थी।।17।।
सुदि वैशाख प्रतिपदा तिथि में, हस्तिनापुर में प्रभु जन्मे थे।।18।।
इस तिथि में ही दीक्षा धारी, वन में किया तपस्या भारी।।19।।
चैत्र शुक्ल तृतिया तिथि आई, प्रभु ने केवल ज्योति जलाई।।20।।
हस्तिनापुर में चार कल्याणक, बकरा चिन्ह सहित कुंथू प्रभु।।21।।
सुदि वैशाख की एकम तिथि में, मुक्ति वरी सम्मेदगिरी से।।22।।
कूट ज्ञानधर की महिमा है, गणधर चरण निकट पहला है।।23।।
जय हो अरहनाथ तीर्थंकर, जो अठारवें माने जिनवर।।24।।
हस्तिनापुर में जन्म हुआ था, उसका कण कण धन्य हुआ था।।25।।
पिता सुदर्शन जी हरषाये, मात मित्रसेना उर आये।।26।।

फाल्गुन वदि तृतिया की तिथि में, गर्भकल्याण किया सुरपति ने।।27।।
धनदराज ने रत्नवृष्टि की, पन्द्रह महिने स्वर्ण वृष्टि की।।28।।
मगसिर सुदि चौदस तिथि आई, जन्मकल्याणक खुशियाँ छाईं।।29।।
नरकों में भी शांति हो गई, कुछ क्षण को विश्रान्ति हो गई।।30।।
तीन लोक के नाथ की महिमा, तीर्थंकर के जन्म की गरिमा।।31।।
चक्रवर्ति सप्तम कहलाए, कामदेव चौदहवें गाए।।32।।
छह खंड राज्य किया फिर त्यागा, जब विराग था मन में जागा।।33।।
मगसिर शुक्ल दशमि तिथि आई, प्रभुवर ने दीक्षा अपनाई।।34।।
तपकर के केवल पद पाया, कार्तिक सित बारस दिन आया।।35।।
चार कल्याणक हस्तिनापुर में, फिर पहुँचे सम्मेदशिखर पे।।36।।
नाटक कूट पे ध्यान लगाया, वहीं से मोक्षधाम को पाया।।37।।
चैत्र अमावस की शुभ तिथि में, शिवतिय वरण किया अर प्रभु ने।।38।।
मछली लाञ्छन स्वर्णिम तन था, तीनों प्रभु तन कनक वर्ण था।।39।।
तीनों प्रभु की भक्ति करें हम, रत्नत्रय की प्राप्ति करें हम।।40।।

–शंभु छंद–

श्री शांति कुंथु अर तीर्थंकरत्रय का चालीसा पढ़ो सदा।
नवनिधि का व्रत भी करके भौतिक सुख सम्पत्ती भरेसदा।।
इन तीनों प्रभु की जन्मभूमि हस्तिनापुरी के दर्श करो।
तीरथ की रज मस्तक पे लगा मानव जीवन को सफल करो।।1।।

हस्तिनापुरी के जम्बूद्वीप में तीन विशाल मूर्तियाँ हैं।
जिनके दर्शन वन्दन करके मिट जाती सभी व्याधियाँहैं।।
श्री गणिनीप्रमुख ज्ञानमती माताजी के ज्ञान का प्रतिफल है।
उनकी ही दिव्य देशना से तीरथ का कण-कण पावन है।।2।।

उनकी शिष्या चंदनामती आर्यिका रचित यह चालीसा।
पच्चिस सौ छत्तिस वीर संवत् वैशाख कृष्ण दुतिया को लिखा।।
श्री ज्ञानमती माता का दीक्षा दिवस सदा स्मरण करो।
रत्नत्रयबोधि प्राप्ति हेतू तीर्थंकरत्रय को नमन करो।।3।।

चालीसा पढ़ चालिस दिन तक चालिस फल को मंत्रित कर लो।
फिर एक-एक वह फल सब भव्यात्माओं को अर्पित कर दो।।
चालीसा का उत्तम फल हे भव्योत्तम! तुम पा जाओगे।
नवनिधियों के स्वामी बनकर इक दिन शिवपद पा जाओगे।।4।।

तीर्थंकर जन्मभूमि तीर्थ वंदना

रचयित्री-आर्यिका चन्दनामती

शेर छन्द–

जय जय जिनेन्द्र जन्मभूमियाँ प्रधान हैं।
जय जय जिनेन्द्र धर्म की महिमा महान है।।
जय जय सुरेन्द्रवंद्य ये धरा पवित्र हैं।
जय जय नरेन्द्र वंद्य ये तीरथ प्रसिद्ध हैं।।1।।
मिश्री से जैसे अन्न में मिठास आती है।
वैसे ही पवित्रात्मा तीरथ बनाती हैं।।
हो गर्भ जन्म दीक्षा व ज्ञान जहाँ पर।
वे तीर्थ कहे जाते हैं आज धरा पर।।2।।
जिनवर जनम से पहले वहाँ इन्द्र आते हैं।
नगरी को सुसज्जित कर उत्सव मनाते हैं।।
सुंदर महल सजाया जाता है वहाँ पर।
जिनवर के पिता-माता रहते हैं वहाँ पर।।3।।
पहली जनमभूमि है नगरि तीर्थ अयोध्या।
शाश्वत जनमभूमी प्रभू की कीर्ति अयोध्या।।

इस युग में किन्तु पाँच जिनेश्वर वहाँ जन्मे।
वृषभाजित अभीनंदन सुमति अनंत वे।।4।।
श्रावस्ती ने संभव जिनेन्द्र को जनम दिया।
कौशाम्बी में श्रीपद्मप्रभू ने जनम लिया।।
वाराणसी सुपार्श्व पार्श्व से पवित्र है।
श्रीचन्द्रपुरी चन्द्रप्रभू से प्रसिद्ध है।।5।।
काकन्दी को सौभाग्य मिला पुष्पदंत का।
भद्दिलपुरी जन्मस्थल शीतल जिनेन्द्र का।।
श्रेयाँसनाथ से पवित्र सारनाथ है।
जिनशास्त्रों में जो सिंहपुरी से विख्यात है।।6।।
श्रीवासुपूज्य जन्मभूमि चम्पापुरी है।
कम्पिल जी विमलनाथ जिनकी जन्मभूमि है।।
तीरथ रतनपुरी है धर्मनाथ की भूमी।
रौनाही से प्रसिद्ध है वह आज भी भूमी।।7।।
श्रीशांति कुंथु अरहनाथ हस्तिनापुर में।
जन्मे जिनेन्द्र तीनों त्रयलोक भी हरषे।।
मिथिलापुरी में मल्लि व नमिनाथ जी जन्मे।
तीर्थेश मुनिसुव्रत जी राजगृही में।।8।।

है जन्मभूमि शौरीपुर नेमिनाथ की।
महावीर से कुण्डलपुरी नगरी सनाथ थी।।
चौबीस जिनवरों की जन्मभूमि को नमूँ।
कर बार-बार वंदना सार्थक जनम करूँ।।9।।

श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा मिली।
कई जन्मभूमियों में नई ज्योति तब जली।।
उन प्रेरणा से जन्मभूमि वन्दना रची।
प्रभु जन्मभूमि तीर्थों की भक्ति मन बसी।।10।।

प्रभु बार-बार मैं जगत में जन्म ना धरूँ।
इक बार जन्मधार बस जीवन सफल करूँ।।
इस भाव से ही जन्मभूमि वन्दना करूँ।
निज भाव तीर्थ प्राप्ति की अभ्यर्थना करूँ।।11।।

यह भक्तिसुमन थाल है गुणमाल का प्रभु जी।
अर्पण करूँ है भावना यात्रा करूँ सभी।।
बस ''चन्दनामती'' की इक आश है यही।
संयम की ही परिपूर्णता जीवन की हो निधी।।12।।

प्रयाग तीर्थ वंदना

–शंभु छंद –

तीर्थ प्रयाग जगत में पहला, दीक्षा तीर्थ कहा जाता।
तीर्थंकर प्रभु ऋषभदेव की, दीक्षा से जिसका नाता।।
युग की आदी में ऋषभदेव ने, केशलोंच जहँ किया प्रथम।
जहाँ त्याग प्रकृष्ट किया उसका ही, नाम प्रयाग पड़ा उत्तम।।1।।

उसको वंदन करके प्रयाग की, महिमा का स्तवन करूँ।
प्राचीन तीर्थ को नया रूप, जो मिला उसे मैं नमन करूँ।।
जहाँ वर्तमान में गंगा यमुना, सरस्वती का संगम है।
इसके कारण ही महाकुंभ का, मेला लगता अनुपम है।।2।।

प्राचीन जैन इतिहास अगर, देखो तो समझ में आता है।
प्रभु ऋषभदेव के रत्नत्रय के, संगम की यह गाथा है।।
तुम सुनो यहाँ पर कई एक, घटनाएँ पहली बार घटीं।
उन रोमांचक इतिहासों से, तीरथ प्रयाग की कीर्ति बढ़ी।।3।।

युग का पहला था केशलोंच, पहली दीक्षा थी हुई जहाँ।
कैवल्य भूमि वह प्रथम, प्रथम था समवसरण वहाँ अधर बना।।

नृप वृषभसेन भी दीक्षा लेकर, प्रभु के गणधर प्रथम बने।
आर्यिका की दीक्षा वहीं प्रथमत; ली थी ब्राह्मी-सुन्दरि ने।।4।।

बस इस प्रकार यह तीर्थ प्रथम, आध्यात्मिकता का केन्द्र बना।
इस भूमी से ही मोक्षमार्ग का, इस कृतयुग में मार्ग चला।।
जिस वृक्ष के नीचे ऋषभदेव ने, दीक्षा लेकर ध्यान किया।
वह अक्षयवट संज्ञा से तीर्थ-प्रयाग का अक्षयधाम हुआ।।5।।

इस नई सहस्राब्दि में उस, तीरथ प्रयाग में काम हुआ।
इक नई भूमि पर तपस्थली-तीरथ का नवनिर्माण हुआ।।
है शहर इलाहाबाद से तेरह, किलोमीटर पर यह तीरथ।
वाराणसि से सौ एक किलो-मीटर दूरी पर है स्थित।।6।।

देखो तो कितनी दूरी से, सुन्दर कैलाशगिरी दिखता।
उस इक्यावन फुट ऊँचे गिरि, कैलाश पे है मनहर प्रतिमा।।
चौदह फुट के उत्तुंग लाल-वर्णी वृषभेश विराज रहे।
झरने व गुफाओं से संयुत, पर्वत दर्शन का लाभ वरें।।7।।

है मुख्य यहाँ पर आकर्षण, दीक्षा कल्याणक का मंदिर।
उस शांत तपोवन में स्थित, ध्यानस्थ प्रभू प्रतिमा सुन्दर।।

सीढ़ी चढ़कर ऊपर जाओ, कुछ क्षण जिनवर का ध्यान करो।
सांसारिक क्षणभंगुर विषयों से, हटकर मन कुछ शांत करो।।8।।

छह माह योग के बाद प्रभू, आहार हेतु जब निकले थे।
हस्तिनापुरी में एक वर्ष, उपवास बाद वे पहुँचे थे।।
श्रेयांसराज ने इक्षूरस, आहार दिया था प्रथम जहाँ।
उस दिन से ही इस धरती पर, शुभ दानतीर्थ प्रारंभ हुआ।।9।।

दीक्षाकल्याण तपोवन के, दर्शन कर आगे बढ़ते हैं।
इक मंदिर में चढ़ करके, समवसरण का दर्शन करते हैं।।
ये दोनों मंदिर तीरथ की, सार्थकता को दरशाते हैं।
बीचों बिच गिरि कैलाश की यात्रा, कर यात्री हरषाते हैं।।10।।

इस तीर्थक्षेत्र के परिसर में, इक कीर्तिस्तंभ बना सुन्दर।
उसमें राजित हैं ऋषभदेव, महावीर की प्रतिमाएँ मनहर।।
कैलाशगिरी पर बने बहत्तर, जिनचैत्यालय को वन्दन।
वहाँ गुफा के मंदिर में अतिशयकारी जिनवर को करूँ नमन।।11।।

सब भगवन्तों के दर्शन वंदन, कर कुछ क्षण विश्राम करो।
वहाँ निर्मित सुन्दर अतिथि भवन में, रहकर प्रभु का ध्यान करो।।

है धर्मध्यान के साथ-साथ, वहाँ बने मनोरंजन साधन।
फूलों के उपवन-बाग-बगीचे, मानो करते प्रभु वंदन।।12।।

श्री गणिनीप्रमुख ज्ञानमति माताजी ने ही यह बतलाया।
इस दीक्षा तीर्थ प्रयाग का नूतन, परिचय सबको करवाया।।
उनके उपकारों से यह धरती, तीर्थ नये पा जाती है।
"चन्दनामती" जिनधर्म की कीर्ति-पताका ये फहराती हैं।।13।।

–दोहा–

दीक्षा केवलज्ञान की, भूमी तीर्थ प्रयाग।
उस ही पावन धाम की, करूँ वंदना आज।।14।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभदेवाय सर्वसिद्धि-करााय सर्वसौख्यं कुरु कुरु ह्रीं नमः।

जम्बूद्वीप तीर्थ वंदना

–शंभु छंद–

तीर्थक्षेत्र हस्तिनापुरी का, कण-कण सचमुच पावन है।
तीन-तीन तीर्थंकर के, कल्याणक से मनभावन है।।
प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव ने, जहाँ प्रथम आहार लिया।
मुनियों की आहारविधी, बतला शिवपथ साकार किया।।1।।

उस पावन तीरथ को मेरा, वंदन है अभिनंदन है।
तीर्थधाम हस्तिनापुरी का, इतिहासों में वर्णन है।।
कौरव-पाण्डव के निमित्त से, हुआ महाभारत भी यहीं।
न्याय हुआ विजयी एवं, अन्याय पराजित हुआ यहीं।।2।।

युगों-युगों के इतिहासों से, बनी ऐतिहासिक नगरी।
महावीर युग में प्रसिद्ध, हो गई आज हस्तिनापुरी।।
वीरप्रभू का पच्चिस सौवां, निर्वाणोत्सव जब आया।
इस तीरथ ने गणिनी माता, ज्ञानमती जी को पाया।।3।।

एक अचेतन तीरथ पर, चैतन्य तीर्थ जब उदित हुआ।
शांती-कुंथू-अरनाथ प्रभू का, चमत्कार तब प्रगट हुआ।।

चार-चार कल्याणक उनके, इसी भूमि पर हुए कभी।
तीर्थंकर चक्री-कामदेव, पदधारक त्रयतीर्थंकर ही।।4।।

यही पुण्य परमाणु ज्ञानमति माता ने स्पर्श किये।
तभी तीर्थ पर जम्बूद्वीप, बनाने के शुभ भाव हुए।।
रचना भी बन गई और, तीरथ का पूर्ण विकास हुआ।
ज्ञानज्योति रथ के निमित्त से, जन-जन को यह ज्ञात हुआ।।5।।

सन् उन्निस सौ पिच्चासी में, लाखों जनता ने देखा।
जम्बूद्वीप की रचना में, भूगोल जैन सबने देखा।
इस धरती पर सदियों के पश्चात् बहारें आई थीं।
शासन और प्रशासन ने भी, मिलकर खुशी मनाई थी।।6।।

धरती पर मानों स्वर्ग देख, सबके हर्षाश्रू छलक पड़े।
पर्वत सुमेरु के ऊपर तक, अभिषेक हेतु जब इन्द्र चढ़े।।
इक सौ इक फुट ऊँचे सुमेरु के, ऊपर भीड़ लगी रहती।
ऊपर से नीचे पूरे जम्बूद्वीप की है रचना दिखती।।7।।

इस रचना में अकृत्रिम जिनवर-मंदिर सभी अठत्तर हैं।
तथा देवभवनों के मिल दो, शतक सात जिन मंदिर हैं।।
इस गोलाकार बनी रचना में, सुन्दर बाग-बगीचे हैं।।
चौदह महानदी और क्षेत्र-पर्वत के दृश्य अनोखे हैं।।8।।

हे आयुष्मन भव्यात्माओं! इन जिनभवनों को नमन करो।
इक सौ छत्तिस सीढ़ी चढ़ कर, गिरिवर सुमेरु वंदन कर लो।
इस जम्बूद्वीप को घेर के चारों, ओर है लवणसमुद्र बना।
उसमें करके नौका विहार, सब प्रतिमा को भी नमन करना।।9।।

पैदल प्रदक्षिणा भी करके, आत्मिक शारीरिक स्वास्थ्य लहो।
प्राकृतिक सुरभि जलवायू से, बिन औषधि के भी स्वस्थ रहो।।
कितने रोगी इस तीरथ के, दर्शन से स्वस्थ हुआ करते।
कितने योगी इस जम्बूद्वीप के, ध्यान में मग्न हुआ करते।।10।।

जब नग्न दिगम्बर मुनिवर इस, मेरू गिरि का वंदन करते।
लगता है सचमुच चारण ऋद्धी-धारी मुनि पर्वत चढ़ते।।
तीर्थंकर के जन्माभिषेक में, चारण ऋषिवर आते हैं।
जिनशास्त्रों में है वर्णन वे, अभिषेक देख हरषाते हैं।।11।।

इसलिए आज भी साधु-सन्त, जन्माभिषेक देखा करते।
अभिषेक वंदना क्रिया आदि से, निज को धन्य किया करते।।
जब पाण्डुक आदि शिलाओं पर, अभिषेक का अवसर प्राप्त करो
तब खुद तीर्थंकर बनने का, निज शुद्ध हृदय में भाव भरो।।12।।

यह पुण्य आज इस कलियुग में, इसलिए सभी को प्राप्त हुआ।
क्योंकि माता श्री ज्ञानमती के, ज्ञान का शुभ्र प्रकाश हुआ।।

जाने-अनजाने में भी जो इन, प्रतिमाओं को नमन करें।
वे मिष्ट मधुर फल को पाकर, अपनी आत्मा को चमन करें।।13॥

यह जम्बूद्वीप की महिमा मैंने, अतिसंक्षिप्त बताई है।
जिस नाम से ही हस्तिनापुरी ने, नूतन ख्याती पाई है।।
इस रचना के अतिरिक्त तीर्थ, परिसर में मंदिर कई बने।
सबमें भगवान विराजित हैं, जिनभक्त भक्ति से उन्हें नमें।।14।।

इस जम्बूद्वीप के मुख्यद्वार पर, कल्पवृक्ष है बना हुआ।
श्रीणमोकार का महामंत्र भी, इसी द्वार पर लिखा हुआ।।
इस द्वार से अंदर जाकर सारा, परिसर स्वर्ग सदृश लगता।
है इतना स्वच्छ सुरम्य तीर्थ, जहाँ रहने का ही मन करता।।15॥

सुन्दर है श्वेत कमल मंदिर, जहाँ कल्पवृक्ष भगवान खड़े।
मनवांछित फल की प्राप्ति हेतु, वहाँ छत्र चढ़ाते भक्त बड़े।।
पुल से जाकर इस मंदिर में, महावीर प्रभू को नमन करो।
अतिशययुत अवगाहन प्रमाण, प्रतिमा से सब सुख वरण करो।।16॥

इक तीन मूर्ति मंदिर विशाल, इस तीर्थ का मुख्य जिनालय है।
वृषभेश भरत बाहूबलि की, प्रतिमाएँ जहाँ सुखालय हैं।।
आजू-बाजू की वेदी में, तीर्थंकर नेमि व पारस हैं।
इनमें से कालसर्प का योग, विनाश करें प्रभु पारस हैं।।17।।

इन सब जिनवर को वन्दन करके, अन्य मंदिरों में भी चलो।
प्रभु शांतिनाथ अरु वासुपूज्य-मंदिर व ॐ मंदिर को नमो।।
फिर मंदिर एक सहस्रकूट, व बीस तीर्थंकर मंदिर है।
श्री ऋषभदेव मंदिर एवं नवग्रह मंदिर भी सुन्दर है।।18।।

इन सातों मंदिर के हि निकट इक तेरहद्वीप जिनालय है।
जहाँ तेरहद्वीप के चार शतक, अट्ठावन शुभ चैत्यालय हैं।।
ढ़ाई द्वीपों में पाँच मेरु, इक सौ सत्तर हैं समवसरण।
देवों के भवन आदि सबमें, दो सहस्र मूर्तियों को प्रणमन।।19।।

सन् उन्निस सौ पैंसठ में गणिनी ज्ञानमती माताजी ने।
पिण्डस्थ ध्यान करते-करते, यह रचना पाई थी उनने।।
देखा पुनश्च करणानुयोग, ग्रंथों में वह सारी रचना।
वह जम्बूद्वीप व तेरहद्वीप की, बनी तभी अद्भुत रचना।।20।।

इस रचना के दर्शन करके, कीर्तिस्तंभ के प्रभुवर को नमो।
फिर सुन्दर उपवन फूलों को लख, अष्टापद मंदिर को चलो।।
त्रैकालिक चौबिस तीर्थंकर युत, गिरि कैलाश सुशोभित है।
इस मंदिर के सम्मुख पूरब में, ध्यान का मंदिर स्थित है।।21॥

चौबिस तीर्थंकर से संयुत, इक हीं की प्रतिमा बनी यहाँ।
भक्तों को ध्यान लीन होने पर, मिलती अनुपम शांति जहाँ।।

बाहर से हरितकाय संयुत, यह मंदिर अतिशय प्यारा है।
ऐसे तीरथ का दर्शन कर, समझो सौभाग्य हमारा है।।22।।

इन सब मंदिर के साथ, मनोरंजन के भी कुछ स्थल हैं।
ऐरावत हाथी पर चढ़ करते, परिक्रमा सब सुखपद्र हैं।।
यात्री सारी सुविधाओं को, पाकर लाभान्वित होते हैं।
ऐसा आनंद न मिला कहीं, ऐसा कहकर खुश होते हैं।।23।।

जयशील रहे यह तीर्थ हस्तिनापुर का यश फैले जग में।
जयशील रहे यह जम्बूद्वीप, व मेरु सुदर्शन भी युग में।।
जयशील ज्ञानमति माता हो, जिनकी यह कर्मभूमि सच में।
उनकी शिष्या "चन्दनामती" की, अभिलाषा यह प्रभु पद में।।24।।

–दोहा–

तीर्थंकर अरु तीर्थ को, नमन करूँ शत बार।
हो तीरथ की वंदना, जीवन में साकार।।

अहिच्छत्र तीर्थ वंदना

–शंभु छंद–

सिद्धों की श्रेणी में आकर, जिनने इतिहास बनाया है।
सिद्धी कन्या का परिणय कर, आत्यंतिक सुख को पाया है।।
उन सिद्धशिला के स्वामी पारसनाथ प्रभू को नमन करूँ।
उनकी उपसर्ग विजय भूमी, अहिच्छत्र तीर्थ को नमन करूँ।।1।।

इतिहास पुराना है लेकिन, हर पल हमको सिखलाता है।
शुभ क्षमा धैर्य अरु सहनशीलता, का संदेश सुनाता है।।
अपनी आतमशांती से शत्रू, भी वश में हो सकता है।
क्या दुर्लभ है जो कार्य क्षमा के बल पर नहिं हो सकता है।।2।।

अहिच्छत्र तीर्थ उत्तरप्रदेश के, जिला बरेली में आता।
जिसके दर्शन-वंदन करके, भक्तों को मिलती सुख साता।।
धरणेन्द्र और पद्मावति ने, जहाँ फण का छत्र बनाया था।
उपसर्ग निवारण कर प्रभु का, सार्थक अहिच्छत्र बनाया था।।3।।

है वर्तमान में भी अतिशय, वहाँ पार्श्वनाथ तीर्थंकर का।
मंदिर तो है अवलम्बन बस, कण-कण पावन है तीरथ का।।
इस तीरथ के पारस प्रभु को, कहते तिखाल वाले बाबा।
प्रतिमा छोटी है किन्तु वहाँ, भक्तों का बड़ा लगे तांता।।4।।

अब चलो करें उस तीरथ की, यात्रा हम सब अन्तर्मन से।
अनुभव ऐसा होगा जैसे, सचमुच हम उस तीरथ पर हैं।।
यहाँ एक विशाल जिनालय में, बीचोंबिच पार्श्वप्रभू राजें।
जहाँ भक्त मनोरथ सिद्धि हेतु, चालीसा करने हैं जाते।।5।।
भावों से शीश झुका अपने, पारस प्रभु की जयकार करो।
प्रातः उठकर मंदिर में जा, अभिषेक व पूजन पाठ करो।।
केवल भौतिक सुख की इच्छा, मत करना जिनवर के सम्मुख।
जैसा प्रभु ने पाया वैसा, मांगे हम भी आध्यात्मिक सुख।।6।।
इस मूलवेदि के बाद चलो, महावीर प्रभू की वेदी पर।
ऐसे ही दूजी ओर विराजे, पार्श्वनाथ इक वेदी पर।।
इन दोनों जिनप्रतिमाओं को, झुककर पंचांग प्रणाम करो।
फिर आगे समवसरण रचना के, दर्शन कर मन शांत करो।।7।।
सर्पों के फणयुत बनी कमल-वेदी पर पार्श्वनाथ काले।
पद्मासन मुद्रा में राजें, सांवरिया सार्थक गुण वाले।।
आगे दो बंद वेदियों में, प्राचीन बहुत हैं प्रतिमाएँ।
जो गदर सतावन के युग की, घटना दिग्दर्शन करवाएँ।।8।।
तीनों पूरब मुख वेदी के ही, बीच में पद्मावति देवी।
अपने अतिशय को दिखा रहीं, पारसप्रभु की शासन देवी।।
लौकिक सुख की इच्छा से सारे, भक्त पूजते हैं इनको।
प्राचीन पद्धती है यह ही, मिथ्यात्व न तुम समझो इसको।।9।।

पूरे मंदिर में घूम-घूमकर, प्रदक्षिणा जिनवर की करो।
भव भव का भ्रमण मिटाने को, मंगल आरति प्रभुवर की करो।।
जैसे निसही निसही कहकर, मंदिर के अंदर जाते हैं।
असही असही कहकर वैसे ही, वापस बाहर आते हैं।।10।।
इस सात शिखर युत मंदिर की, सीढ़ी से अब नीचे उतरो।
फिर चलो तीस चौबीसी मंदिर, के अंदर प्रभु दर्श करो।।
हैं सात शतक अरु बीस मूर्तियाँ, दश कमलों पर राज रहीं।
सब अलग-अलग पंखुडियों पर, पद्मासन वहाँ विराज रहीं।।11।।
इस मंदिर के बीचों बिच में, खड्गासन पार्श्वनाथ प्रतिमा।
प्रभु के शरीर अवगाहनयुत, होने से उसकी है महिमा।।
यह मंदिर बना ज्ञानमति माताजी की पुण्य प्रेरणा से।
उनके ही द्वारा दिये गये, प्रभु नाम यहाँ उत्कीर्ण भी हैं।।12।।
यह अद्वितीय रचना लखकर, हर दर्शक आनंदित होता।
गणिनी माता श्री ज्ञानमती के, प्रति वह सदा विनत होता।।
ढाईद्वीपों के पाँच भरत, पंचैरावत की प्रतिमाएँ।
दश क्षेत्रों के त्रैकालिक सात सौ-बीस जिनेश्वर कहलाए।।13।।
इनका वंदन करने से इक दिन, खुद का भी वंदन होगा।
इनका अर्चन करने से इक दिन, निज का भी अर्चन होगा।।

है एक तीस चौबीसी का, मण्डल विधान भी सुखकारी।
इस रचना के सम्मुख उसको, करके हो प्राप्त पुण्य भारी।।14।।
धीरे-धीरे सब कमलों के, सम्मुख जाकर वंदना करो।
फिर पार्श्वनाथ के चरणों में, कुछ देर बैठ अर्चना करो।।
इस जिनभक्ती की तुलना कोई, पुण्य नहीं कर सकता है।
इस भक्ती के द्वारा मानव, भवसागर से तिर सकता है।।15।।
यहाँ ह्रीं बिम्ब के दर्शन करके, मंदिर से बाहर निकलो।
इस ग्यारह शिखरों युत मंदिर के, बाद तृतिय मंदिर में चलो।।
श्री पार्श्वनाथ पद्मावति मंदिर, नाम से इसकी ख्याती है।
जहाँ पार्श्वनाथ के साथ मात-पद्मावति पूजी जाती हैं।।16।।
जिनवर के आजू-बाजू में, धरणेन्द्र व पद्मावति प्रतिमा।
बतलाती हैं अहिच्छत्र तीर्थ, सार्थकता की गौरव-गरिमा।।
मंदिर के संग-संग तीरथ पर, निर्मित हैं कई धर्मशाला।
जिनमें रह करके पुण्य कार्य, करता है हर आने वाला।।17।।
यह तीर्थ वंदना पढ़कर प्रभु को, सदा-सदा स्मरण करूँ।
पारस प्रभु के अगणित गुण में से, क्षमा भाव को ग्रहण करूँ।।
हे प्रभो! किसी से वैर का बदला, लेने के नहिं भाव बनें।
''चन्दनामती'' इस जीवन में, अहिच्छत्र तीर्थ वरदान बने।।18।।

कुण्डलपुर तीर्थ वंदना

जो भवसमुद्र से तिरवाता, वह तीर्थ कहा जाता जग में।
वह द्रव्य तीर्थ औ भावतीर्थ, दो रूप कहा जिन आगम में।।
तीर्थंकर के जन्मादिक से, पावन हैं द्रव्यतीर्थ सच में।
हर प्राणी की आत्मा परमात्मा भावतीर्थ मानी जग में।।1।।
सतयुग में चौबिस तीर्थंकर, जन्में जब इस पृथिवी तल पर।
इन्द्राज्ञा से तब धनकुबेर ने, रत्नवृष्टि कर दिया सुखद।।
उन सब तीर्थंकर भगवन्तों की, जन्मभूमि को नमन करूँ।
फिर महावीर की जन्मभूमि, कुण्डलपुर तीरथ को प्रणमूँ।।2।।
धवला तिलोयपण्णत्ति आदि, प्राचीन ग्रंथ अध्ययन किया।
उनमें कुण्डलपुर के राजा, सिद्धार्थ का शासन कथन मिला।।
वे नंद्यावर्त महल में रानी, त्रिशला के संग रहते थे।
छब्बिस सौ वर्षों पूर्व जहाँ पर, रत्न असंख्य बरसते थे।।3।।
तिथि चैत्र सुदी तेरस के दिन, वहाँ महावीर का जन्म हुआ।
माता त्रिशला के साथ-साथ, पूरा कुण्डलपुर धन्य हुआ।।

वह नगरी काल थपेड़ो से, वीरान हुई थी कलियुग में।
लेकिन फिर से आ गया समय, छब्बीससौंवें जन्मोत्सव में।।4।।

श्री गणिनीप्रमुख ज्ञानमति माताजी 'की सम्प्रेरणा मिली।
प्रभु महावीर की जन्मभूमि, कुण्डलपुर में नव ज्योति जली।।
कुण्डलपुर के प्राचीन जिनालय, का कुछ जीर्णोद्धार हुआ।
कीर्तिस्तंभ के निर्माण से प्रभु-इतिहास वहाँ साकार हुआ।।5।।

इक नंद्यावर्त महल परिसर में, स्वर्ग उतर आया मानो।
प्रभु वीर का युग स्मरण हुआ, अतिशय साक्षात् इसे जानो।।
यहाँ मुख्य द्वार से विश्वशांति, महावीर जिनालय दिखता है
अतएव सभी भक्तों का मन, ऊपर जाने को करता है।।6।।

महावीर प्रभू की जय बोलो, फिर चालिस सीढ़ी पार करो।
अंतर का दीप जलाकर प्रभु, चालीसा का फल प्राप्त करो।।
यहाँ प्रतिमा अवगाहन प्रमाण, महावीर प्रभू की खड्गासन।
उस दुग्ध सदृश उज्ज्वल प्रतिमा के, दर्शन से हो मन प्रसन्न।।7।।

इक शतक आठ फुट ऊँचे इस, मंदिर का है अतिशय भारी।
उत्तुंग शिखर में भी जिनवर, प्रतिमाएँ शोभ रहीं प्यारी।।

प्रभु की प्रदक्षिणा कर उनका, अभिषेक व पूजन पाठ करो।
कुण्डलपुर अवतारी त्रिशलानंदन, आरति का ठाठ करो।।8।।

प्रभु नाम मंत्र जपते-जपते, सीढ़ी उतरो आगे को चलो।
फिर प्रदक्षिणा क्रम से तीर्थंकर, ऋषभदेव के द्वार चलो।।
इस मंदिर में वृषभेश्वर की, चौदह फुट पद्मासनप्रतिमा।
इनका दर्शन करके जानो, जिनधर्म की है शाश्वत महिमा।।9।।

आगे चलकर नवग्रह शांती, जिनमंदिर के दर्शन कर लो।
नव कमलों पर वहाँ राज रहे, नव जिनवर को वंदन कर लो।।
जिस ग्रह का हो तुम पर प्रकोप, उस ग्रहनाशक प्रभु को भज लो।
पूजन विधान औ जाप्य आदि के, द्वारा ग्रह शांती कर लो।।10।।

इस मंदिर के ही निकट विशाल, जिनालय तीन मंजिला है।
त्रैकालिक चौबीसी मंदिर के, नाम से इसकी गरिमा है।।
सबसे नीचे इस मंदिर में हैं, भूतकाल की प्रतिमाएँ।
फिर वर्तमान व भविष्यत् की, क्रमशः ऊपर जिनप्रतिमाएँ।।11।।

तीनों मंजिल में चौबिस चौबिस, प्रतिमाओं को नमन करो।
आगे खुद भी तीर्थंकर बनने, हेतु पुण्य को ग्रहण करो।।

देखो इस मंदिर के समक्ष है, नंद्यावर्त महल सुन्दर।
छब्बिस सौ वर्षों बाद पुनः, इतिहास दिखाया है अन्दर।।12।।

कैसे-प्रभु वीर जन्म से पहले, इन्द्र यहाँ पर आते थे।
तब माता त्रिशला के आंगन में, धनद रत्न बरसाते थे।।
इन्द्रों ने आकर इसी महल में, प्रभु का जन्म कल्याण किया।
अन्दर जाकर देखो इन दृश्यों, का कैसा निर्माण हुआ।।13।।

इस महल के अन्दर महावीर के, जीवन के कुछ दृश्य दिखे।
सिद्धार्थ राज का सिंहासन, रानी त्रिशला का पलंगदिखे।।
देखो जो दो चारण मुनिवर, निःशंक हुए थे प्रभु ढिग आ।
दोनों ने अतिशय खुश होकर, जिनशिशु को सन्मति नाम दिया।।14।।

इन मुनियों को कर नमन महल के, सभी दृश्य देखो रुचि से।
फिर सबसे ऊपर शांतिनाथ, चैत्यालय दर्श करो मन से।।
है तीन लोक आकार एक, वहाँ ऊपर सिद्धशिला देखो।
हैं सिद्ध अनंतानंत जहाँ उस, सिद्धलोक को नमन करो।।15।।

इस तरह तीर्थ कुण्डलपुर के, दर्शन कर मन संतुष्ट हुआ।
अतिशायी नंद्यावर्त महल, देखा तो हृदय प्रफुल्ल हुआ।।

जिस नगरी का कण-कण मस्तक पर, धारण करने योग्य कहा।
वह जन्म सफल करने वाला, तीरथ जन-जन से पूज्य महा।।16।।

निज जन्म सफल करना हो तो, प्रभु जन्मभूमि को नमन करो।
यदि कर्म सुखद करना हो तो, तीर्थंकर को स्मरण करो।।
ऐसी ही पावन धरती पर, प्रभुवर! हो कभी जनम मेरा।
बन सकूँ अजन्मा कभी अगर, तो समझूँ पूर्ण भ्रमण मेरा।।17।।

तीर्थंकर श्री महावीर प्रभू, मंगलकारी हों जगभर में।
उनकी अतिशायी जन्मभूमि, कुण्डलपुर को हर भक्त नमे।।
नवनिर्मित सभी जिनालय, कुण्डलपुर के मंगलमय होवें।
"चंदनामती" प्रभु दर्शन से, मेरा भी जन्म सफल होवे।।18।।

ॐ ह्रीं विश्वशांतिकराय
श्री महावीर जिनेन्द्राय नमः।

पावापुरी सिद्धक्षेत्र वंदना

(स्रग्विणी छन्द)

वंदना मैं करूँ पावापुर तीर्थ की,
जो है निर्वाणभूमी महावीर की।।
अर्चना मैं करूँ पावापुर तीर्थ की,
जो है कैवल्यभूमी गणाधीश की।।
जैनशासन के चौबीसवें तीर्थंकर,
जन्मे कुण्डलपुरी राजा सिद्धार्थ घर।
रानी त्रिशला ने सपनों का फल पा लिया,
बोलो जय त्रिशलानंदन महावीर की।।1।।

वीर वैरागी बनकर युवावस्था में,
दीक्षा ले चल दिये घोर तप करने को।
मध्य में चन्दना के भी बंधन कटे,
बोलो कौशाम्बी में जय महावीर की।।2।।

प्रभु ने बारह बरस तक तपस्या किया,
केवलज्ञान तब प्राप्त उनको हुआ।

राजगिरि विपुलाचल पर प्रथम दिव्यध्वनि,
खिर गई बोलो जय जय महावीर की।।3।।

तीस वर्षों में, प्रभु का भ्रमण जो हुआ,
सब जगह समवसरणों की रचना हुई।
पावापुर के सरोवर से शिवपद लिया,
बोलो जय पावापुर के महावीर की।।4।।

मास कार्तिक अमावस के प्रत्यूष में,
कर्मों को नष्ट कर पहुँचे शिवलोक में।
तब से दीपावली पर्व है चल गया,
बोलो सब मिल के जय जय महावीर की।।5।।

पावापुर के सरोवर में फूले कमल,
आज भी गा रहे कीर्ति प्रभु की अमर।
वीर प्रभु के चरण की करो अर्चना,
बोलो जय सिद्ध भगवन् महावीर की।।6।।

पंक में खिल के पंकज अलग जैसे हैं,
मेरी आत्मा भी संसार में वैसे है।
उसको प्रभु सम बनाने का पुरुषार्थ कर,
जय हो अंतिम जिनेश्वर महावीर की।।7।।

पूरे सरवर के बिच एक मंदिर बना,
जो कहा जाता जल मंदिर है सोहना।
पारकर पुल से जाकर करो वंदना,
बोलो जय पास जाकर महावीर की।।8।।

लोग प्रतिवर्ष दीपावली के ही दिन,
पावापुर में मनाते हैं निर्वाणश्री।
भक्त निर्वाणलाडू चढ़ाते जहाँ, बोलो
उस भूमि पर जय महावीर की।।9।।

वीर के शिष्य गौतम गणीश्वर ने भी,
पाया कैवल्यपद वीर सिद्धि दिवस।
पूजा महावीर के संग करो उनकी भी,
बोलो गौतम के गुरु जय महावीर की।।10।।

पावापुर में नमूँ वीर के पदकमल,
और गौतम, सुधर्मा के गणधर चरण।
''चन्दनामति'' चरणत्रय का वन्दन करो,
बोलो जय रत्नत्रयपति महावीर की।।1।।

सम्मेदशिखर टोंक वन्दना

तीर्थराज सम्मेदशिखर है, शाश्वत सिद्धक्षेत्र जग में।
एक बार जो करे वन्दना, वह भी पुण्यवान सच में।।
ऊँचा पर्वत पार्श्वनाथ हिल, नाम से जाना जाता है।
जिनशासन का सबसे पावन, तीरथ माना जाता है।।1।।

जब प्रत्यक्ष करें यात्रा, उस पुण्य का वर्णन क्या करना।
लेकिन प्रतिदिन भी परोक्ष में, गिरि का ध्यान किया करना।।
आँख बन्दकर करो कल्पना, मेरी यात्रा शुरू हुई।
प्रातःकाल चले सब यात्री, जय जयकारा शुरू हुई।।2।।

एक हाथ में छड़ी दूसरे, में चावल की झोली है।
ज्यादातर सब पैदल हैं, पर किसी-किसी की डोली है।।
कभी न चलने वाले भी, हिम्मत कर पर्वत चढ़ते हैं।
पारस प्रभु के पास पहुँचने, हेतु कदम बढ़ चलते हैं।।3।।

चढ़ते-चढ़ते आठ किलोमीटर, का पथ जब तय होता।
दायें हाथ तरफ तब इक, चौपड़ा कुंड दर्शन होता।।
वहाँ दिगम्बर जिनमंदिर, संस्कृति की अमिट धरोहर है।
पार्श्वनाथ चन्द्रप्रभु बाहुबलि की मूर्ति मनोहर हैं।।4।।

उस मन्दिर में रुककर अपने, प्रभु का दर्शन कर लेना।
सुन्दर बनी धर्मशाला में, इच्छा हो तो ठहर लेना।।
मंदिर दर्शन करके फिर, यात्रा प्रारंभ करो अपनी।
बायें हाथ चलो चढ़ कर जहाँ, गौतम स्वामी टोंक बनी।।5।।

यहाँ पहुँचकर ठंडी-ठंडी, हवा थकान मिटाती है।
गणधर चरण वन्दना से, यात्रा की शक्ती आती है।।
प्रथम टोंक यह हुई पास में, दुतिय टोंक कुंथु जिन की।
तीर्थंकर क्रम में यह पहली, टोंक नमूँ कुंथु प्रभु की।।6।।

इन टोंकों के दर्शन से, उपवास का फल प्रारंभ हुआ।
त्रय प्रदक्षिणा देने से, आगे शुभ गति का बंध हुआ।।
शुभ भावों से आगे बढ़कर, टोंक तीसरी आती है।
श्रीनमिनाथ जिनेश्वर की, वन्दना सहज हो जाती है।।7।।

चौथा नाटक कूट तीर्थंकर, अरहनाथ का आया है।
जहाँ करोड़ों मुनियों ने भी, तपकर शिवपद पाया है।।
वन्दन कर आगे बढ़ने से, मल्लिनाथ के चरण मिले।
आगे छठे टोंक पर श्री, श्रेयाँसनाथ पदकमल मिले।।8।।

इन सबका वन्दन कर मैंने, सिद्धशिला को नमन किया।
वहाँ विराजे सिद्धों को, अपने मन में स्मरण किया।।

थकना नहिं अब पुष्पदंत की, सप्तम टोंक पे चलनाहै।
आगे चढ़ने हेतु वहीं से, आतमशक्ती भरना है।।9।।

पुष्पदंत प्रभु के चरणों में, अर्घ्य चढ़ाकर नमन किया।
और चले आठवीं टोंक पर, पदमप्रभू का शरण लिया।।
नवमीं टोंक विराजे श्री, मुनिसुव्रत जिन के चरणकमल।
इन सबके पावन पद में, श्रद्धा से मैंने किया नमन।।10।।

हे भव्यात्मन् ! अब दसवीं चन्द्रप्रभ टोंक पे चलना है।
पहले दौड़-दौड़ कर उतरो, फिर ऊँचाई चढ़ना है।।
चन्द्रप्रभ मंदिर में जाकर, चरणवन्दना करना है।
अपने सारे सुख-दुख को, प्रभु चरण बैठकर कहना है।।11।।

अब ग्यारहवीं टोंक पे चलकर, ऋषभदेव को नमन करो।
गिरि कैलाश से मुक्त हुए, यहाँ उनके चरण चिन्ह प्रणमो।।
श्री शीतल जिनवर की है, बारहवीं टोंक प्रसिद्ध कही।
मन-वच-तन से वन्दन कर, पाओ यात्रा का पुण्य सही।।12।।

श्री अनंत तीर्थंकर का, तेरहवाँ कूट स्वयंभू है।
उनके चरणों में श्रद्धायुत, शीश झुकाकर वन्दूँ मैं।।
संभव जिनवर का चौदहवाँ, धवलकूट माना जाता।
वासुपूज्य जिनका पन्द्रहवां, टोंक सभी को सुखदाता।।13।।

इनको वन्दन कर आगे, अभिनन्दन प्रभु के पास चलो।
बन्दर चिन्ह सहित उन प्रभु की, टोंक पे बन्दर से ान्डरो।।
अभिनन्दन के चरणों में, कर नमन चलो जलमंदिर तक।
चढ़ो वहाँ से जहाँ है गौतम, गणधर प्रभु की टोंक प्रथम।।14।।

फिर सत्रहवीं टोंक से अपनी, अगली यात्रा करना है।
धर्मनाथ प्रभु के चरणों में, नमन सभी को करना है।।
सुमतिनाथ का अट्ठारहवाँ, टोंक है अविचल कूट कहा।
नौ करोड़ बत्तीसलाख, उपवास का फल मिलता है यहाँ।।15।।

उन्निसवाँ है टोंक शांतिजिन, का जो यहाँ से मोक्ष गये।
नौ करोड़ से अधिक मुनी, इस कुंदकूट से मोक्ष गये।।
शांतिनाथ के संग सब मुनियों, को श्रद्धा से नमन किया।
पुनः बीसवीं टोंक पे जाकर, वीरप्रभू की शरण लिया।।16।।

श्री सुपार्श्व तीर्थंकर इक्कीसवीं टोंक पर राजे हैं।
कहते हैं यहाँ की मिट्टी से, रोग सभी नश जाते हैं।।
इनका वंदन करके पास में, विमल नाथ की टोंक चलो।
बाइसवीं इस टोंक को नमकर, अजितनाथ के निकट चलो।।17।।

थके कदम से तेइसवीं इस, टोंक का वंदन कठिन तो है।
लेकिन यात्रा पूरी करने, का शुभ भाव हृदय में है।।

धीरे-धीरे चढ़कर आखिर, अजितनाथ तक पहुँच गये।
उन चरणों में नमन किया फिर, नेमिनाथ जी प्राप्त हुए।।18।।

इस चौबिसवीं टोंक पे नेमीनाथ चरण को नमन किया।
पारसनाथ प्रभू पाने हेतू फिर मैंने गमन किया।।
स्वर्णभद्र यह टोंक है अंतिम, यात्रा पूर्ण यहाँ होती।
पार्श्वनाथ की पूजन करके, मन सन्तुष्टि यहाँ होती।।19।।

कुछ क्षण ध्यान करो फिर नीचे, गुफा में स्थित चरण नमो।
खुशी-खुशी वन्दना पूर्ण कर, पर्वत से नीचे उतरो।।
यही वन्दना आत्मा की, भव्यत्व शक्ति बतलाती है।
तभी "चन्दनामती" सभी में, भक्ति स्वयं आ जाती है।।20।।

भगवन् ! इस सम्मेदशिखर का, पुनः पुनः दर्शन पाऊँ।
यही भावना है मन में, सिद्धों के गुण में रम जाऊँ।।
इसी क्षेत्र से कभी मुझे, निर्वाण धाम भी मिल जावे।
सिद्ध भक्ति मेरे जीवन में, सिद्ध अवस्था दिलवाये।।21।।

महामृत्युंजय स्तोत्र

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

तीन लोक का हर प्राणी जिनके चरणों में झुकता है।
तीन लोक का अग्रभाग जिनकी पावनता कहता है।।
जन्म मृत्यु से रहित नाथ वे मृत्युञ्जयि कहलाते हैं।
मृत्युञ्जयि प्रभु के वन्दन से जन्म मृत्यु नश जाते हैं।।1।।

जिसने जन्म लिया है जग में मृत्यू उसकी निश्चित है।
इसी जन्ममृत्यू के कारण सारे प्राणी दुक्खित हैं।।
जन्म समान न दुख कोई अरु मरण सदृश नहिं भय जग में।
जान लें यदि संभावित मृत्यू अर्धमृतक नर हों सच में।।2।।

हे प्रभुवर! जिस तरह आपने जन्म मृत्यु का नाश किया।
अविनाशी परमातम पद को पाकर सौख्य अपार लिया।।
उसी तरह का सौख्य निराकुल नाथ! मुझे भी मिल जावे।
देव शास्त्र गुरु की भक्ती का फल सच्चा तब मिल जावे।।3।।

कभी जन्म कुण्डलियाँ अपमृत्यू का भय दिखलाती हैं।
कभी हाथ की रेखाएँ कुछ अल्प आयु दरशाती हैं।।

शारीरिक वेदना कभी जब असहनीय हो जाती है।
रोग ग्रसित मानव की इच्छा मरने की हो जाती है।।4।।

जिनशासन कहता है लेकिन ऐसा नहीं विचार करो।
आत्मघात की इच्छा से मरना न कभी स्वीकार करो।
क्योंकि ऐसा मरण सदा भव-भव में दुःख प्रदाता है।
नरक पशू योनी में प्राणी अगणित कष्ट उठाता है।।5।।

सुखमय जीवन में भी अपमृत्यु के ग्रह रह सकते है।
हो जाय प्राण घातक हमला तो असमय में मर सकते हैं।।
मोटर गाड़ी या वायुयान की दुर्घटना हो सकती हैं।
भूकम्प बाढ़ बम विस्फोटों से त्राहि-त्राहि मच सकती है।।6।।

ऐसे असमय के मरण देख मानव का मन घबराता है।
मेरा न अकाल मरण होवे यह भाव सहज में आता है।।
हे भव्यात्मन्! इसलिए सदा तुम मृत्यंजय स्तोत्र पढ़ो।
मृत्युंजय मंत्र के सवा लाख मंत्रों को जपकर सौख्य भरो।।7।।

ये ह्रां ह्रीं अरु ह्रूं ह्रौं ह्रः बीजाक्षर शक्तीशाली।
पाँचों परमेष्ठी नाममंत्र के साथ बने महिमाशाली।।
अपमृत्यु विनाशक महामृत्युंजय मंत्र इसे जो जपते हैं।
पूर्णायु प्राप्त कर चिरंजीव हो स्वस्थ काय युत बनते हैं।।8।।

जिनशासन के ग्रंथों में भी अपमृत्यु विनाशक मंत्र कहा।
पोदनपुर नृप श्री विजयराज ने मृत्यु विजय का यत्न किया।।
सच्ची रोमांचक कथा प्रभू भक्ती की महिमा कहती है।
नवजीवन कैसे मिला उन्हें व्रत नियम की गरिमा रहती है।।9।।

इकबार निमितज्ञानी ने राजा की अपमृत्यू बतलाई।
नृपसिंहासन पर वज्रपात की भावी घटना समझाई।।
राजा ने सात दिनों तक सारे राजपाट को त्याग दिया।
जिनमंदिर में जा अनुष्ठान कर नियम सल्लेखना धार लिया।।10।।

नृपसिंहासन पर पत्थर की मूरत मंत्री ने बनवाई।
हुआ निश्चित तिथि पर वज्रपात मूरति पर अशुभ घड़ी आई।।
सिंहासन प्रतिमा चूर हुई राजा का नहीं बिगाड़ हुआ।
टल गया अकाल मरण उनका जिनधर्म का जय जयकार हुआ।।11।।

धर्मानुष्ठान समापन करके राज्य पुनः स्वीकार किया।
इस चमत्कार को देख प्रजा ने धर्म का जय जयकार किया।।
हे भव्यात्मन्! यदि तुमको भी अपमृत्यु की आशंका होवे।
यह मृत्युञ्जय स्तोत्र पठन तुमको नित मंगलमय होवे।।12।।

अट्ठारह दिन तक स्तोत्र पढ़ो दश-दश माला प्रतिदिन जप लो।
मृत्युंजय यंत्र के सम्मुख माला जप स्तोत्र पाठ कर लो।।

उस यंत्र का कर अभिषेक परम औषधि सम उसको ग्रहण करो।
स्तोत्र पाठ के संग यहाँ लघु मंत्र को भी नौ बार पढ़ो।।13।।

इक भोज पत्र का यंत्र बना अपने संग उसे सदा रक्खो।
गुरुमाता गणिनी ज्ञानमती जी से सम्पूर्ण विधी समझो।।
अपनी सम्पूर्ण व्यथा गुरु के सम्मुख कहकर मन शान्त करो।
मृत्युंजय मंत्र स्तोत्र आदि पढ़कर निज मन निर्भ्रान्त करो।।14।।

प्रातः स्तोत्र पाठ करके घर से बाहर यदि निकलोगे।
दुर्घटना संकट आदि सभी से अपनी रक्षा कर लोगे।।
कितनी भी विषम परिस्थिति में कोई निमित्त बन जाएगा।
आयू यदि अपनी शेष रही तो कोई मार न पाएगा।।15।।

निज जन्मकुण्डली के ग्रह को यह प्राणी बदल भी सकता है।
हाथों की रेखा भी पुरुषार्थ से निराकार कर सकता है।।
जब कर्मों की स्थिति का घटना बढ़ना भी हो सकता है।
तब मृत्युंजय स्तोत्र पाठ से काल न क्यों रुक सकता है।1।16।।

हे नाथ! मरण होवे मेरा तो मरण समाधीपूर्वक हो।
संयमधारी गुरु के समूह में संयम धारणपूर्वक हो।।
दो-तीन या सात-आठ भव में मैं भी शिवपद को प्राप्त करूँ।
मिथ्यात्व असंयम से मिलने वाला भव भ्रमण समाप्त करूँ।।17।।

श्री गणिनीप्रमुख ज्ञानमती माता की शिष्या चन्दनामती।
मृत्युंजय पद की प्राप्ति हेतु स्तोत्र की यह रचना कर दी।।
जब तक मृत्युंजय पद न मिले मृत्युंजयि प्रभु का ध्यान करूँ।
अरिहन्त-सिद्ध के चरणों में मैं कोटीकोटि प्रणाम करूँ।।18।।

-महामृत्युंजय मंत्र-

(1) ॐ ह्रां णमो अरिहंताणं, ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं, ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं, ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं, ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं मम सर्वग्रहारिष्टान् निवारय निवारय अपमृत्युं घातय घातय सर्वशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।

(2) ॐ ह्रीं अर्हं झं वं ह्रः पः हः मम सर्वापमृत्युजयं कुरु कुरु स्वाहा।

नवग्रहशांति स्तोत्र

–शंभु छन्द–

सिद्धों का वंदन इस जग में, आतम सिद्धी का कारण है।
इनकी भक्ती से भक्त करें, दुर्गति का सहज निवारण है।।
सब तीर्थंकर भगवंत एक दिन, सिद्धिप्रिया को पाते हैं।
इसलिए सभी ग्रह की शांती में, वे निमित्त बन जाते हैं।।1।।

नभ में जो सूर्य, सोम, मंगल, बुध, गुरु व शुक्र, शनि ग्रह माने।
राहू केतू मिलकर नवग्रह, ज्योतिषी देव के ग्रह माने।।
मानव के जन्म समय से ये सब, जन्मकुण्डली में रहते।
शुभ-अशुभ आदि फल देने में राशी अनुसार निमित बनते।।2।।

जब ग्रह अनिष्टकारी होवें, तब प्रभु भक्ती रक्षा करती।
जिनसागर सूरि ने बतलाया, नवग्रह में नव प्रभु की भक्ती।।
श्रीपद्मप्रभ भगवान सूर्य-ग्रह के अरिष्ट को शांत करें।
ग्रह सोम का जब होवे प्रकोप, तब भक्त चन्द्रप्रभु याकरें।।3।।

निज मंगल ग्रह की शांति हेतु, प्रभु वासुपूज्य को नमन करो।
बुधग्रह जब देवे कष्ट तुरत, प्रभु मल्लिनाथ अर्चन कर लो।।
महावीर प्रभू गुरु ग्रह से होने, वाले कष्ट मिटाते हैं।
निज गुरुबल तेजस्वी करने हित, वर्धमान को ध्याते हैं।।4।।

श्री पुष्पदंत भगवान शुक्र-ग्रह के शांतीकारक माने।
शनिग्रह अति उग्र हुआ तो भी, मुनिसुव्रत प्रभु उसको हानें।
ग्रह राहु अगर होवे अरिष्ट, तो नेमिनाथ का मंत्र जपो।
प्रभु पार्श्वनाथ के चरणों में, ग्रह केतु शांति हेतू प्रणमो।।5।।

ये नव तीर्थंकर नवग्रह की, शांती में हेतू माने हैं।
है दुख का मूल असाता ही, पर बाह्य निमित ग्रह माने हैं।।
जिन भक्ति असाता कर्मों को, साता में परिवर्तित करती।
ग्रह से उत्पन्न सभी बाधा, तब ही तो शांत हुआ करती।।6।।

पूजन-अर्चन के साथ-साथ, ग्रहशांति मंत्र का जाप करो।
जितनी संख्या जिस मंत्र की है, उसको कर मन संताप हरो।।
अपने प्रभु के अतिरिक्त कहीं, मिथ्यामत में मत भरमाना।
दुख संकट आने पर भी कभी, जिनधर्म को भूल नहीं जाना।।7।।

नवग्रहशांती की पूजन कर, नवग्रह का कभी विधान करो।
तीर्थंकर प्रभु के गुण गाकर, निज आतम गुण भंडार भरो।
निज जन्मकुण्डली में स्थित, ग्रह को भी उच्चस्थान करो।
फिर सूर्य-चन्द्र सम शुभ प्रकाश से, जीवन का उत्थान करो।।8।।

बीसवीं सदी की प्रथम बालसति, गणिनी माता ज्ञानमती।
उनकी शिष्या "आर्यिका चन्दनामति" ने यह स्तुती रची।।
पच्चिस सौ तीस वीर संवत्, तिथि फाल्गुन कृष्णा चतुर्दशी।
निजशांति हेतु ग्रहशांति हेतु, प्रभु पद में अर्पित काव्यकृती।।9।।

तीर्थंकरत्रय मंत्र

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थंकर-चक्रवर्ति-कामदेवपद-समन्वित-श्री शांतिनाथकुंथुनाथअरनाथ-तीर्थंकरेभ्यो नमः।

ऋषिमण्डल स्तोत्र

(पद्यानुवाद-गणिनी आर्यिका ज्ञानमती)

–शंभु छंद–

आदी अक्षर 'अ' अंताक्षर, 'ह' इन दो को ले लेने में।
'आ' से लेकर 'स' पर्यंते, सब अक्षर आ जाते इनमें।।
अग्नी ज्वाला 'र' बीजाक्षर, ऊपर यह बिंदु सहित सुंदर।
'अर्हं' यह मंत्र बना सुंदर, यह मंत्र मनोमल शोधनकर।।1।।

ॐ अर्हंतों को नमस्कार, ॐ सिद्धों को द्वय नमस्कार।
ॐ सर्वसूरि को नमस्कार, ॐ पाठक गण को नमस्कार।।
ॐ सर्व साधु को नमस्कार, ॐ सम्यग्दृग् को नमस्कार।
ॐ शुद्ध ज्ञान को नमस्कार, ॐ चारित को द्वय नमस्कार।।2।।

इन अरहंतादि आठपद को, निज निज बीजाक्षरयुत करके।
अठ दिश में स्थापन करते, ये लक्ष्मीप्रद हैं सुख करते।।
पहला पद शिर का रक्षक हो, दूजा मस्तक का त्राण करे।
तीजा पद दोनों दृग् रक्षे, चौथा पद नासा त्राण करे।।3।।

पंचम मुख का रक्षाकर हो, छट्ठा पद ग्रीवा को रक्षे।
सप्तम पद नाभी तक रक्षे, अष्टम पद पादों तक रक्षे।।
पहले प्रणवाक्षर ॐ पुनः, 'ह' को रकार औ बिंदु सहित।
दूजी तीजी पंचम छट्ठी, सप्तम अष्टम दशवीं द्वादश।।4।।

इन मात्रा युत करके पाँचों, पद के पहले पहले अक्षर।
फिर सम्यग्दर्शन ज्ञान और, चारित्र विभक्ती युत सुखकर।।
हो ह्रीं नमः बस इसविध से, अतिशायी मंत्र बना सुन्दर।
यह ऋषिमंडल स्तवनयंत्र का, मूलमंत्र है श्रेयस्कर।।5।।

नव बीजाक्षर युत सिद्धमंत्र, अष्टादश शुद्धाक्षर इसमें।
आराधक को शुभफलदायी, अति भक्ती से जपिये नित में।।
जंबूतरुधारी प्रथमद्वीप, यह लवणोदधि से वेष्टित है।
आठों दिश अधिपति अर्हदादिइन आठ पदों से शोभित है।।6।।

इस जंबूद्वीप मध्य मेरू, जो लाखों कूटों से शोभे।
ऊपर ऊपर ज्योतिर्वासी, देवों के भ्रमणों से शोभे।।
इस पर स्थापित ह्रीं मंत्र, उस पर अर्हंत बिंब सुंदर।
उनको ललाट में स्थित कर, मैं नमूँ नित्य कर्माञ्जनहर।।7।

अर्हंतदेव ये अक्षय हैं, निर्मल विशाल अज्ञानरहित।
निर्मान शांत इच्छाविरहित, शुभ सार सारतर और सात्विक।।
राजस कर्मारिनाश हेतू, तामस है विरस शुद्ध तैजस।
ज्योत्स्नासम साकार तथापी, निराकार औ सरस विरस।।8।।

पर उत्तम हैं उत्तमतर औ, उत्तमतम सर्वोत्तम इससे।
पर तथा परापर परातीत, पर का परपरापरं कहते।।
तनसहित सकल तनरहित निकल, संतुष्ट पूर्णभृत भ्रांतिरहित।
निर्लेप निरंजन निराकांक्ष, संशय विरहित क्षण भंगरहित।।9।।

ब्रह्मा ईश्वर औ बुद्ध शुद्ध, वे महादेव ज्योतीस्वरूप।
सब लोकालोकप्रकाशी हैं, अर्हंत जिनेश्वर चित्स्वरूप।।
जो सांत सरेफ बिंदुमंडित, चौथे स्वर से युत होता है।
वह 'ह्रीं' बीज ध्यानादि योग्य, अर्हंत नाम का होता है।।10।।

वह श्वेत वर्ण है श्याम वर्ण, है लाल वर्ण औ नील वर्ण।
औ पीतवर्ण भी है उत्तम, सर्वोत्तम माना महावर्ण।।
इस ह्रीं बीज में स्थित हैं,निज निज वर्णों से युक्त सभी।
वृषभादि जिनेश्वर इस स्तोत्र में, संस्थित ध्यानयोग नित भी।।11।।

सित अर्धचंद्रसम नाद बिन्दु, नीली मस्तक है लालवर्ण।
सब तरफ हकार स्वर्णसम है, ईकार कहा है हरित वर्ण।।
इस तरह 'ह्रीं' है पंचवर्ण, उन उन वर्णों के तीर्थंकर।
उस उस थल में स्थापित कर, उन सबको नमन करो सुखकर।।12।।

श्री चंद्रप्रभु औ पुष्पदंत, शशिसदृश नाद में स्थित हैं।
श्री नेमिनाथ औ मुनिसुव्रत, बिन्दू के मध्य विराजित हैं।
श्री पद्मप्रभू औ वासुपूज्य मस्तक के मध्य अधिष्ठित हैं।
श्री जिनसुपार्श्व औ पार्श्वनाथ, ईकार वर्ण के आश्रित हैं।।13।।

सोलह तीर्थंकर शेष सभी, ह औ रकार में राजित हैं।
मायाबीजाक्षर ह्रीं मध्य, चौबीसों जिनवर आश्रित हैं।।
ये रागद्वेष औ मोह रहित, सब पाप रहित चौबिस जिनवर।
संपूर्ण लोक में भव्यों के, हेतूहोवें वे नित सुखकर।।14।।

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, सर्पों से मुझे न हो बाधा।।
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, गोहों से मुझे न हो बाधा।।15।।

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, बिच्छू से मुझे न हो बाधा।
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, नागिनी से हो न मुझे बाधा।।16।।

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, काकिनी से मुझे न हो बाधा
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, डाकिनी से हो न मुझे बाधा।।17।।

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, साकिनी से मुझे न हो बाधा।
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, राकिनी से हो न मुझे बाधा।।18।।

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, लाकिनी से मुझे न हो बाधा।
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, शाकिनी से हो न मुझे बाधा।।19।।

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, हाकिनी से मुझे न हो बाधा।
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, भैरव से हो न मुझे बाधा।।20।।

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, राक्षस से मुझे न हो बाधा।
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, व्यंतर से हो न मुझे बाधा।।21।।

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, भेकस से मुझे न हो बाधा।
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, लीनस से हो न मुझे बाधा।।22।।

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, ग्रहों से मुझे न हो बाधा।
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, चोरों से हो न मुझे बाधा।।23।।

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, अग्नी से मुझे न हो बाधा।
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, सींगवालों से नहिं हो बाधा।।24।।

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, दाढ़वालों से नहिं हो बाधा।
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, पक्षी से हो न मुझे बाधा।।25।।

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, दैत्यों से मुझे न हो बाधा।
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, मेघों से हो न मुझे बाधा।।26।।

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, सिंहों से मुझे न हो बाधा।
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, सूकर से हो न मुझे बाधा।।27।।

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, चीतों से मुझे न हो बाधा।
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, हाथी से हो न मुझे बाधा।।28।।

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, राजा से मुझे न हो बाधा।
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, शत्रू से हो न मुझे बाधा।।29।।

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, ग्रामिण से मुझे न हो बाधा।
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, दुर्जन से हो न मुझे बाधा।।30।।

देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, रोगों से मुझे न हो बाधा।
देवाधिदेव का जो समूह, उनके तन की सुन्दर आभा।
उससे सर्वांग ढका मेरा, सब जन से हो न मुझे बाधा।।31।।

श्री गौतम गुरु की जो मुद्रा, उससे जग में श्रुत ज्ञान लाभ।
उनसे भी अधिक ज्योतिधारी, अर्हंत सर्व निधि ईश ख्यात।।
पातालवासि भावन व्यंतर, भूपीठवासि ज्योतिष सुरगण।
ये देव करें रक्षा मेरी, दिव के भी कल्पवासि सुरगण।।32।।

जो अवधिज्ञान ऋद्धीयुत मुनि, जो परमावधि ऋद्धीयुत हैं।
वे मेरी रक्षा करें सर्वतरफी वे सभी दिव्य मुनि हैं।।
ॐ श्री ह्री धृति लक्ष्मी गौरी, चंडी सरस्वती जया अम्बा।
विजया क्लिन्ना अजिता नित्या औ मदद्रवा औ कामांगा।।33।।

कामवाणा देवी सानंदा, सुरि नंदमालिनी औ माया।
मायाविनी रौद्री कलादेवि, कालीदेवी औ कलिप्रिया।।
जिनशासन रक्षाकर्त्री ये सब, महादेवियाँ हैं जग में।
ये मुझको कांती लक्ष्मी धृति मति, देवें क्षेम करें जग में।।34।।

दुर्जन वेताल पिशाच भूत, औ क्रूर दैत्य गण हैं जितने।
देवाधिदेव के प्रभाव से, वे सब उपशांत रहें जग में।।
श्री ऋषिमंडल स्तोत्र दिव्य, यह गोप्य तथा अतिदुर्लभ है।
जगरक्षाकृत निर्दोष तीर्थकृत, वीरप्रभू से भाषित है।।35।।

रणनृपदरबार अग्नि जल गज, औ दुर्ग सिंह के संकट में।
शमसान विपिन में मंत्र जाप्य, मनुजों का त्राण करे सच में।।
जो राज्यभ्रष्ट निज राज्य लहे, पदभ्रष्ट मनुज निज पद पाते।
इसमें संदेह नहीं लक्ष्मी से, च्युत निजलक्ष्मी भी पाते।।36।।

भार्या अर्थी भार्या लभते, सुत अर्थी सुत को पा जाते।
स्तोत्र स्मरण मात्र से ही, धन अर्थी धन भी पा जाते।।
कांचन रूपा अथवा कांसे पर, लिखकर जो पूजे इसको।
उसके घर शाश्वत अष्टमहा, सिद्धी रहती है यह समझो।।37।।

यह मंत्र भूर्जपत्रे पर लिख, मस्तक ग्रीवा या बाहू में।
जो धारे दिव्य यंत्र उसके, सब भय विनाश होते क्षण में।।
वह भूत प्रेत ग्रह यक्ष दैत्य, औ पिशाच गण के कष्टों से।
छुट जाता नहिं संशय इसमें, कफ वात पित्त के रोगों से।।38।।

जो अधो मध्य औ ऊर्ध्वलोक में, जिनप्रतिमाएँ शाश्वत हैं।
उनके दर्शन स्तुति वंदन से, जो फल वह स्तुति पठन का है।
यह महास्तोत्र अति गोपनीय, जिस किसको नहिं देने का है।
मिथ्यादृष्टी को देने से, शिशुघात पाप पद पद पर है।।39।।

आचाम्ल आदि तप कर चौबिस, जिनवर की पूजाविधि करके।
जप आठ हजार करे विधिवत्, सब कार्य सिद्ध होते उसके।।
जो प्रतिदिन प्रातः इसी मंत्र की इक सौ अठ जप करते हैं।
उनके शरीर में व्याधि न हो, सुख संपत्ती वो लभते हैं।।40।।

जो आठ मास तक नित प्रातः, इस महास्तोत्र को पढ़ते हैं।
वे निज में तेजपुंज अर्हंत, बिम्ब का दर्शन करते हैं।।
अर्हंतबिंब दर्शन होने पर, निश्चित ही सप्तम भव में।
वे मुक्तीपद पा लेते हैं, परमानंद संपति युत सच में।।41।।

–दोहा–

श्री गुणनन्दिमुनीन्द्रकृत, ऋषिमण्डल स्तोत्र।
"ज्ञानमती" मैं आर्यिका, किया पद्य स्तोत्र।।42।।

स्तोत्र महास्तोत्र यह, सब स्तुति में सर्वोच्च।
स्मरण पठन और जाप से, जन हों अघ से मुक्त।।43।।

शांति भक्ति

(पद्यानुवाद-गणिनी आर्यिका ज्ञानमती)

भगवन्! सब जन तव पद युग की, शरण प्रेम से नहिं आते।
उसमें हेतु विविधदुःखों से, भरित घोर भववारिधि है।।
अतिस्फुरित उग्र किरणों से, व्याप्त किया भूमंडल है।
ग्रीषम ऋतु रवि राग कराता, इंदुकिरण छाया जल में।।1।।
क्रुद्धसर्प आशीविष डसने, से विषाग्नियुत मानव जो।
विद्या औषध मंत्रित जल, हवनादिक से विष शांति हो।।
वैसे तव चरणाम्बुज युग, स्तोत्र पढ़े जो मनुज अहो।
तनु नाशक सब विघ्न शीघ्र, अति शांत हुये आश्चर्य अहो।।2।
तपे श्रेष्ठ कनकाचल की, शोभा से अधिक कांतियुत देव।
तव पद प्रणमन करते जो, पीड़ा उनकी क्षय हो स्वयमेव।।
उदित रवी की स्फुट किरणों से, ताड़ित हो झट निकल भगे।
जैसे नाना प्राणी लोचन, द्युतिहर रात्री शीघ्र भगे।।3।।
त्रिभुवन जन सब जीत विजयि बन, अतिरौद्रात्मक मृत्युराज।
भव भव में संसारी जन के, सन्मुख धावे अति विकराल।।

किस विध कौन बचे जन इससे, काल उग्र दावानल से।
यदि तव पाद कमल की स्तुति, नदी बुझावे नहीं उसे।।4।।
लोकालोक निरन्तर व्यापी, ज्ञानमूर्तिमय शांति विभो।
नानारत्न जटित दण्डेयुत, रुचिर श्वेत छत्रत्रय हैं।।
तव चरणाम्बुज पूतगीत रव, से झट रोग पलायित हैं।
जैसे सिंह भयंकर गर्जन, सुन वन हस्ती भगते हैं।।5।।
दिव्यस्त्रीदृगसुन्दर विपुला, श्रीमेरू के चूड़ामणि।
तव भामंडल बाल दिवाकर, द्युतिहर सबको इष्टअति।।
अव्याबाध अचिंत्य अतुल, अनुपम शाश्वत जो सौख्य महान्।
तव चरणारविंदयुगलस्तुति से ही हो वह प्राप्त निधान।।6।।
किरण प्रभायुत भास्कर भासित, करता उदित न हो जब तक।
पंकजवन नहिं खिलते निद्रा-भार धारते हैं तब तक।।
भगवन्! तव चरणद्वय का हो, नहीं प्रसादोदय जब तक।
सभी जीवगण प्रायः करके, महत् पाप धारें तब तक।।7।।
शांति जिनेश्वर शांतचित्त, से शांत्यर्थी बहु प्राणीगण।
तव पादाम्बुज का आश्रय, ले शांत हुये हैं पृथिवी पर।।
तव पदयुग की शांत्यष्टकयुत, संस्तुति करते भक्ती से।
मुझ भाक्तिक पर दृष्टि प्रसन्न करो, भगवन्! करुणा करके।।8।।

शशि सम निर्मल वक्त्र शांतिजिन, शीलगुण व्रत संयम पात्र।
नमूँ जिनोत्तम अंबुजदृग को, अष्टशतार्चित लक्षण गात्र।।9।।
चक्रधरों में पंचमचक्री, इन्द्र नरेन्द्र वृंद पूजित।
गण की शांति चहूँ षोडश, तीर्थंकर नमूँ शांतिकर नित।।10।।
तरुअशोक सुरपुष्पवृष्टि, दुंदुभि दिव्यध्वनि सिंहासन।
चमर छत्र भामंडल ये अठ, प्रातिहार्य प्रभु के मनहर।।11।।
उन भुवनार्चित शांतिकरं, शिर से प्रणमूँ शांति प्रभु को।
शांति करो सब गण को मुझको पढ़ने वालों को भी हो।।12।।
मुकुटहारकुंडल रत्नों युत, इन्द्रगणों से जो अर्चित।
इन्द्रादिक से सुरगण से भी, पादपद्म जिनके संस्तुत।।
प्रवरवंश में जन्में जग के, दीपक वे जिन तीर्थंकर।
मुझको सतत् शांतिकर होवें, वे तीर्थेश्वर शांतीकर।।13।।
संपूजक प्रतिपालक जन, यतिवर सामान्य तपोधन को।
देशराष्ट्र पुर नृप के हेतू, हे भगवन्! तुम शांति करो।।14।।
सभी प्रजा में क्षेम नृपति, धार्मिक बलवान् जगत् में हो।
समय समय पर मेघवृष्टि हो, आधि व्याधि का भी क्षय हो।।
चौर मारि दुर्भिक्ष न क्षण भी, जग में जन पीड़ा कर हो।
नित ही सर्व सौख्यप्रद जिनवर, धर्मचक्र जयशील हो।।15।।

वे शुभद्रव्य क्षेत्र अरु काल, भाव वर्ते नित वृद्धि करें।
जिनके अनुग्रह सहित मुमुक्षु, रत्नत्रय को पूर्ण करें।।16।।
घातिकर्म विध्वंसक जिनवर, केलवज्ञानमयी भास्कर।
करें जगत में शांति सदा, वृषभादि जिनेश्वर तीर्थंकर।।17।।

–अंचलिका–

हे भगवन्! श्री शांतिभक्ति का, कायोत्सर्ग किया उसके।
आलोचन करने की इच्छा, करना चाहूँ मैं रुचि से।।
अष्टमहा प्रातिहार्य सहित जो पंचमहाकल्याणक युत।
चौंतिस अतिशय विशेष युत, बत्तिस देवेन्द्र मुकुट चर्चित।।
हलधर वासुदेव प्रतिचक्री, ऋषि मुनि यति अनगार सहित।
लाखों स्तुति के निलय वृषभ से, वीर प्रभू तक महापुरुष।।
मंगल महापुरुष तीर्थंकर, उन सबको शुभ भक्ती से।
नित्यकाल मैं अर्चूं पूजूँ, वंदूँ नमूँ महामुद से।।
दुःखों का क्षय कर्मों का क्षय, हो मम बोधिलाभ होवे।
सुगति गमन हो समाधिमरणं, मम जिनगुण संपति होवे।।

वैराग्य अष्टक

–शंभु छंद–

भावों की महिमा न्यारी है, जिनसे चेतन का नाता है।
जड़ चेतन ही मिलकर बनते, हम सबके पिता व माता हैं।।
संसार में ही रहते ये सब नहिं मोक्ष का इनसे नाता है।
वैराग्य भाव आ जाने पर, शिव से नाता जुड़ जाता है।।1।।

परिणामों का ही खेल जगत में, खेल रहे हैं सब प्राणी।
पर में अपनत्व भाव करके, सब जीव बन रहे अज्ञानी।।
इस कारण काल अनादी से, मैंने भी भव का भ्रमण किया।
निज आत्मा को नहिं पहचाना, जाने कितनों की शरण लिया।।2।।

कितनी दुर्लभता से मैंने, अनमोल मनुजभव प्राप्त किया।
फिर भी जिनधर्म न पाने से, कितना मैंने संताप सहा।।
श्रावक पर्याय भी पा करके, इन्द्रिय विषयों में बुद्धि रही।
सारों में सार उसे माना, नहिं तभी आतमा शुद्ध हुई।।3।।

कुछ पुण्य जनम जन्मान्तर में, संचित मैंने भी किया प्रभो!।
बस इसीलिए इस भव में कुछ वैराग्य भाव पा लिया प्रभो!।।
हे प्रभु! मेरा सम्यग्दर्शन, भव-भव में भी दृढ़ बना रहे।
क्योंकी सम्यक्त्व सहित विराग ही, मेरे भव की व्यथा हरे।।4।।

मेरे जीवन की घड़ियों में, प्रभु कब ऐसा क्षण आवेगा।
जब शान्त निराकुल हो मेरा तन, गिरि पर ध्यान लगावेगा।।
मन में भी हलचल नहीं रहे, मेरू सम अविचल बन जावे।
आंधी तूफानों में भी मन की, शक्ती भंग न हो जावे।।5।।

दीक्षा का अर्थ न केवल, वेष का परिवर्तन कहलाता है।
इस परिवर्तन के साथ भाव, परिवर्तन भी हो जाता है।।
आतमज्योती का दीप जले, पशुता का भाव क्षपण होता।
वह दानक्षपण से सहित भाव ही, दीक्षा का मतलब होता।।6।।

ऐसी दीक्षा ले करके मैं, वन-वन में विचरण योग्य बनूँ।
गुरुवर की सन्निधि को पाकर, सुसमाधिमरण के योग्य बनूँ।।
तन से भी ममता दूर हटे, स्वातम समता का भाव जगे।
यह भाव प्राप्त होने तक प्रभु, मेरे मन का मिथ्यात्व भगे।।7।।

अपने दीक्षित परिणामों को, मैं सदा-सदा स्मरण करूँ।
यदि किंचित् विकृति हो मन में,उस ही क्षण का संस्मरण करूँ।।
कलिकाल का यह अभ्यास मेरा, परभव में मुक्ति दिलाएगा।
''चन्दनामती'' पुरुषार्थ मेरा, नहिं व्यर्थ प्रभो अब जाएगा।।8।।

नवोदित भावना

–शंभु छंद –

रे मन! तेरी चंचलता पर, विश्वास न मुझको आता है।
मैं चाहूँ आत्म मगन होना, तू उसको क्यों भरमाता है।।
मैं तेरे वश में रहा सदा, अब तू मेरे वश में आ जा।
सांसारिक बातों से हटकर, अब तू भी शिवपथ में आ जा।।1।।

तूने अपने संग पाँच-पाँच, इन्द्रिय सखियों को बाँध रखा।
उनकी इच्छा अनुकूल प्रवृत्ती, करने में तू रमा रहा।।
गुरुओं ने चाहे कितना भी, समझाया मुझको ध्येय बना।
लेकिन वह समझ कहाँ आता, जब मैं विषयों का दास बना।।2।।

स्पर्शन इन्द्रिय ने जब-जब, अपनी सुख इच्छा प्रगट करी।
प्रासुक-अप्रासुक में भी ध्यान न दे अभिलाषा पूर्ण करी।।
चाहे हो ठंडा-गरम-कड़ा या, नरम सभी का स्पर्श किया।
जिसमें मिल गया क्षणिक सुख उसको ही शाश्वत सुख समझ लिया।।3।।

रसना इन्द्रिय ने जब सुन्दर, पकवानों को खाना चाहा।
उसके सुख में सुख मान स्वयं तन-मन-धन खूब किया स्वाहा।।

जब चाहा जिसको जो बोला, कैंची सम जीभ चलाई है।
इस इन्द्रिय ने दो कार्यों से, पाई सर्वदा बुराई है।।4।।

सुरभित सुगंधि कीओर स्वयं, घ्राणेन्द्रिय तुरत पहुँचती है।
भौंरे की मृत्यू देख भी उसकी, अभिलाषा नहिं मिटती है।।
मैंने भी उसके वश होकर, केवल सुगंध लेनी चाही।
दुर्गन्ध में समता पल न सकी, इस तरह विवशता बन आई।।5।।

आँखों ने सुन्दर रूपों का, अवलोकन जब करना चाहा।
चल पड़ा मेरा मन उसी तरफ, चक्षू को देने सुख छाया।।
नाटक व सिनेमा देख-देख, भौतिक माया में पड़ा रहा।
अन्तर्चक्षू नहिं किया कभी, ऐसा बाहर में रमा रहा।।6।।

कर्णेन्द्रिय ने अपना रुचिकर, संगीत सदा सुनना चाहा।
प्रभु भजन श्रवण तो दूर कभी, सत्संग कथा नहिं सुन पाया।।
ऐसे ही काल अनादी से, विकथाएँ खूब सुनीं मैंने।
उसमें ही सुख पा गया क्षणिक, शाश्वत सुख पाता कैसे मैं।।7।।

इन पंचेन्द्रिय एवं मन के, संग में ही सच मैं रमा रहा।
नहिं देव-शास्त्र-गुरु शरण लिया, इससे ही जग में दुःखी रहा।।
वह सतयुग भी बेकार हुआ, जब सम्यग्दर्शन नहीं मिला।
जाने कितनी पर्यायों में, घूमा असली फल नहीं मिला।।8।।

अब कलियुग यह वरदान बना, मेरे इस जीवन उपवन में।
जब सम्यग्दर्शन प्राप्त हुआ, नर जन्म किया सार्थक मैंने।।
साक्षात् गुरू के दर्शन से, ये भाव नवोदित प्रगट हुए।
''चन्दनामती'' गुरु वंदन से, वैराग्य भाव शुभ उदित हुए।।9।।

–दोहा –

पंचेन्द्रिय मन के सभी, अशुभ भाव नश जाय।
शुभ भावों को प्रगट कर, शुद्ध बनूँ शिव पाय।।10।।

तीनलोक मंत्र

ॐ ह्रीं अर्हं त्रैलोक्यसंबंधिअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागम-जिनचैत्यचैत्यालयेभ्यो नमः।

''सीता की अग्नि परीक्षा''

रामायण सुनकर हे बंधू! क्या ऐसा तुम्हें न लगता है।
मर्यादा पुरुषोत्तम का पद, क्या तुमको भ्रमित न करता है।।
उस राम नाम से बनी हुई, रामायण गाई जाती है।
सच पूछो उसमें सीता की ही, सहनशीलता आती है।।1।।

कलियुग की नारी तो सीधे, न्यायालय का पथ अपनाती।
अपने अपराधी पति को, कारावास के अन्दर पहुँचाती।।
नारी पर अत्याचार के व्यापक, समाचार छपने लगते।
पति के विरुद्ध चौपालों में, चर्चा बहुतेक पुरुष करते।।2।।

जितना सीता ने सहन किया, उतने ही कर्म प्रहार हुए।
वन में भी वह पति संग रही, महलों के सुख सब त्याग दिए॥
क्या यही परीक्षा उसे सती, बतलाने में पर्याप्त न थी?
श्रीराम के द्वारा धोखे की, बातें उस प्रति अन्याय ही थीं।।3।।

सह लिया जहाँ तक सहा गया, उसने पति के अन्यायों को।
फिर आखिर उसने ठुकराया, उनकी भी मनोव्यथाओं को।।

बोली हे राम! मुझे तुमने, क्यों झूठ बोल वन भिजवाया।
मुझ गर्भवती नारी के प्रति, कर्त्तव्य तुम्हारा यह था क्या?।।4।।

सौहार्द दिखाते यदि किञ्चित्, तो ऋषि आश्रम में भिजवाते।
या किसी आर्यिका माता की, बसती में मुझको छुड़वाते।।
मेरी रक्षा भी हो जाती, कुछ सम्बोधन भी मिल जाता।
क्या पता तभी मेरा जीवन भी, साध्वी जैसा बन जाता।।5।।

तुम बोलो मौन भला क्यों हो, यदि शेर मुझे आ खा जाता।
तब तीन प्राणियों की हिंसा में, तुमको क्या आनन्द आता।।
कर्मों की प्रबल परीक्षा में, जैसे-तैसे उत्तीर्ण हुई।
अब तुम्हें तुम्हारे बच्चों को, देने हेतू अवतीर्ण हुई।।6।।

इनको जैसे भी बना पिता, माता दोनों का प्यार दिया।
निज दुख से दुखी हुई जब भी, इनमें तुम रूप निहार लिया।।
ये पुण्डरीकपुर के उपवन में, खेल-खेलकर बड़े हुए।
गुरुमुख से विद्याध्ययन किया, तुम सम्मुख देखो खड़े हुए।।7।।

अब इन्हें संभालो हे राजन्! इनके संग ऐसा मत करना।
इतने दिन माँ के संग रहे, अब अपने संग इनको रखना।।
हे मर्यादा पुरुषोत्तम! इनको, अब मर्यादा सिखलाना।
अन्याय करें नहिं अबला पर, यह संशोधन भी करवाना।।8।।

सन्तोष मुझे पतिदेव आज, ये राजपुत्र निज घर में हैं।
मैं मुक्त हुई इनकी जिम्मेदारी से ये रघुकुल में हैं।।
अब एक परीक्षा अंतिम मेरी, ले लो जो भी इच्छा हो।
अग्नी में पड़ूँ या विष खा लूँ, बोलो जो लगता अच्छा हो।।9।

जनता को खुश करने हेतू, बस राम ने निर्णय कर डाला।
दो अग्निपरीक्षा हे सीते! यह धधक रही भीषण ज्वाला।।
नगरी के बच्चे-बच्चे ने, इस निर्णय को धिक्कारा था।
फिर भी सीता ने शान्तमना, होकर उसको स्वीकारा था।।10।।

लक्ष्मण, लव-कुश, हनुमान सभी, समझा-समझाकर हार गए।
सन्तों ने अपने तप की भी, सौगन्ध से थे विश्वास दिए।।
पर राम न माने थे किञ्चित्, वे अपनी हठ पर खड़े हुए।
अपनी सुकुमारी पत्नी के प्रति, निष्ठुर बनकर खड़े रहे।।11।।

सीता के मुख पर तेजस्वी, आभा उस समय छलकती थी।
कर नहीं तो डर कैसा उसकी, काया से क्रान्ति झलकती थी॥
मन में ईश्वर को नमन किया, पति को प्रणाम कर कूद गई।
हो गए राम मूर्च्छित तत्क्षण, सीता की यादें डूब गईं।।12।।

लोगों ने समझा सीता का, इतिहास यहीं हो या खत्म।
लेकिन कुछ क्षण में जयजयकारों, के स्वर से गूँजा आगगन।।

देवों ने धरती की सतियों का, सदा सदा सम्मान किया।
सीता के इस उपसर्ग में भी, आकर प्रत्यक्ष प्रमाण दिया।।13।।

अग्नि की धधकती ज्वाला को, जल के सरवर में बदल दिया।
सरवर के मध्य सिंहासन पर, सति को गौरव से बिठा दिया॥
वह जनकनंदिनी ध्यानलीन, बैठी है स्वर्णसिंहासन पर।
पुष्पों रत्नों की वर्षा हो रही, शीलशिरोमणि के ऊपर।।14।।

हे सीते! तुम तो धन्य धन्य, हर्षाश्रू सबके निकल पड़े।
साकेतपुरी के कण-कण से, अब मिलन के आंसू टपक पड़े।
इस समाचार को पाते ही, श्रीराम भी अब दौड़े आए।
अपराध क्षमा कर दो देवी! हम तुम्हें लिवाने हैं आए।।15।।

तुम बिना महल भी सूना है, हे रानी! चलो संभालो तुम।
अब मेरे ऊपर भी अपना, पूरा अधिकार चलाओ तुम।।
हे वैदेही! अब तेरे बिन, इक पल मैं नहिं रह सकता हूँ।
इतने दिन कैसे कटे मेरे, यह कैसे मैं कह सकता हूँ ?।।16॥

मत देर करो मेरी सीता, देखो यह रथ तैयार खड़ा।
मेरे सपनों की रानी तेरे, सम्मुख तेरा राम खड़ा।।
जो दण्ड मुझे देना चाहो, स्वीकार मुझे सब करना है।
मत इंतजार अब करवाओ, सारे दुख सहज बिसरना है।।17।।

मुझको तो था विश्वास तभी, जब लंका से वापस लाया।
मुनियों के मन सम है विशुद्ध, मेरी सीता जी की काया।।
पर नगर अयोध्या की जनता, ने अन्यायी मुझको माना।
बस इसीलिए जंगल में तुमको, पड़ा मुझे था भिजवाना।।18।।

यह निश्चित ही अन्याय भरा, कर्त्तव्य राम बन कर डाला।
लेकिन मेरे मन में तब से ही, धधक रही थी विरह ज्वाला।।
तुमको बतलाकर कहो भला, कैसे तुमको तज सकता था?
रघुकुल की इज्जत हे सीते! फिर कैसे मैं कर सकता था?।।19।।

बीती को भूलो प्राण प्रिये! अब सुख के दिन फिर आए हैं।
तुम जैसी शीलशिरोमणि को, पाकर हम धन्य कहाए हैं।।
माँ चलो उठो लव कुश बोले, अब दुःखी पिता को शांत करो
भाभी के चरणों में लक्ष्मण, पड़ गए नमन स्वीकार करो।।20।।

सबके भावों की भावुकता, लख भी सीता दृढ़ बनी रही।
बोली इसमें नहिं दोष किसी का, कर्मों की है गती यही।।
मैंने ही पूर्व भवों में कोई, अशुभ कर्म बाँधे होंगे।
उनका ही फल अब मिला मुझे, संचित कुछ और अभी होंगे।।21।।

हे नाथ! क्षमा करना मुझको, यह आज्ञा पल नहिं पाएगी।
अब आपकी सुकुमारी सीता, अपने मन से वन जाएगी।।

दीक्षा लेकर आर्यिका मात बन, स्त्रीलिंग नशाएगी।
निज आतमराम को पाने को, सीता महाव्रत अपनाएगी।।22।।

होकर अधीर श्रीरामचन्द्र, सीता के सम्मुख बिलख पड़े।
इतनी कठोर मत बनो प्रिये, ये पुत्र रो रहे खड़े-खड़े।।
सीता मानो अब दृढ़ता की, देवी बनकर ही आई थी।
इसलिए किसी के मोह की उस पर, नहीं पड़ी परछाईं थी।।23।।

अब कथन बंद करके उसने, निज केशलोंच प्रारंभ किया।
कुछ केश राम को दे सीता ने, द्वन्द्व जाल को बंद किया।।
बेहोश हो गए रामचन्द्र, सीता का त्याग न सह पाये।
सब परिजन पुरजन भी रोए, पर विचलित उसे न कर पाए।।24।।

वह तो चल दी उस उपवन में, जहाँ पृथ्वीमती विराजी थीं।
दशरथ की माँ सीता की दादी, सास बनी माताजी थीं।।
उनके चरणों में जा सीता, हो गई समर्पित भक्ती से।
हे माँ! मुझको दे दो दीक्षा, घर त्याग दिया अब युक्ती से।।25।।

साध्वी दीक्षा लेकर सीता, उनके ही संघ में बैठी थी।
होकर सचेत आ गए राम, देखा तो वहीं सीता भी थी।।
सब माताओं को नमस्कार कर, सीता को भी नमन किया।
हे मातः! कहकर पूरबकृत, दोषों को राम ने शमन किया।।26।।

यह जैनधर्म की रामायण में, सत्य कथानक आया है।
सीता ने पृथ्वीमति माता को, अपना गुरू बनाया है।।
यह किंवदन्ति चल गई तभी, सीता पृथ्वी में समा गई।
समझो वह भाव समर्पण था, नहिं धरती में वह समा गई।।27।।

धरती में समाने वाली तो, पापी आत्माएँ होती हैं।
सीता जैसी सतियाँ ऊरधगामी आत्माएँ होती हैं।।
उसने तो तपकर मरणसमाधी, से जीवन का अन्त किया।
फिर अच्युत स्वर्ग में जा प्रतीन्द्र, पद पाकर जीवन धन्य किया।।28।।

स्वर्गों के सुख को भोग पुनः, वह इन्द्र धरा पर आएगा।
मानुषयोनी में फिर तपकर, अविनश्वर सुख को पाएगा।।
है मोक्षमहल इक अति सुन्दर, उसका राजा बन जाएगा।
फिर सिद्धिप्रिया से कर विवाह, यहाँ कभी न वापस आयेगा।।29।।

सच पूछो सीता के कारण, रामायण लिखी है कवियों ने।
सीता के प्रति आकर्षण है, भारत की सारी गलियों में।।
नारी ने अपने संग सदा, नर को भी पूज्य बनाया है।
हर कष्ट को सहने में नारी ने, कीर्तीमान बनाया है।।30।।

हैं वर्तमान में भी कितनी, सतियाँ भारत की निधियाँ हैं।
''चन्दनामती'' ये देश-धर्म के, प्रति बलिदानी कृतियाँ हैं।।

नारी है खान नरों की भी, जो वीरों को पनपाती है।
माँ-पत्नी-बहन आदि बनकर, अपना कर्त्तव्य निभाती है।।31।।

जब-जब रामायण पढ़ी सुनी, इक चिन्तन मन में आया है।
भारत की सतियों को जाने, क्यों पुरुषवर्ग ने सताया है।।
सोचो तो सृष्टिव्यवस्था में, स्त्री व पुरुष हैं सहभागी।
पुरुषों की अर्धांगिनी सदा, नारी है पति की अनुरागी।।32।।

दोनों का ही सम्मान उचित, अपमान किसी का नहिं होवे।
भावों में है अरमान यही, इस देश का गौरव नहिं खोवे।।
भारत की संस्कृति टिकी आज भी, नारी के पतिव्रत पर है।
सारे देशों में इसीलिए, भारत का गौरव ऊपर है।।33।।

स्वास्थ्य मंत्र

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोसहि
पत्ताणं आरोग्यलाभं कुरु कुरु स्वाहा।

गणिनी ज्ञानमती बारहमासा

तर्ज –मुक्तिपथ का पथिक...

बारहमासा सुनो ज्ञानमति मात का,
जिनने निज में समाया सभी मास को।
सारा संसार विषयों का स्वादी बना,
तब ये तज कर चलीं सब विषय आश को।।1।।

चैत्र महिना बसन्ती गुलाबी ऋतू,
जिसको नर नारी कहते हैं अपना हितू।
कृष्ण एकम को तुम क्षुल्लिका बन गईं,
षोडशी सोलहकारण व्रती बन गईं।
चैत्र का मास सचमुच सफल हो गया,
क्योंकि तुममें समा ही गया मास वो।।1।।
बारहमासा.....

मास वैशाख में ग्रीष्म ऋतु आ गई,
पेय द्रव्यों की ठण्डी बहारें चलीं।

कृष्ण दुतिया को तुम आर्यिका बन गईं,
ज्ञान की कैसी ठण्डी फुहारें चलीं।
मास वैशाख सचमुच सफल हो गया,
आर्यिका ज्ञानमतिमय बना मास वो।।2।।
बारहमासा.....

ज्येष्ठ में लू हवा गर्म चलने लगी,
घर में छुप छुप पिपासा मचलने लगी।
कोमलांगी की पदयात्रा चलती रही,
रक्त की धार पैरों से बहती रही।
ज्येष्ठ का मास सचमुच सफल हो गया,
मात से प्राप्त कर ज्ञान की प्यास को।।3।।
बारहमासा.....

मास आषाढ़ में वर्षा ऋतु आ गई,
तप रही यह धरा तृप्ति कुछ पा गई।
वर्षायोग स्थापन करें मात श्री,
जिस नगर ने तुम्हें पाया वह धन्य भी।
मास आषाढ़ सचमुच सफल हो गया,
प्राप्त कर ज्ञानमति के चतुर्मास को।।4।।
बारहमासा.....

मास श्रावण में ललनाएं गाने लगीं,
झूलकर रक्षाबन्धन मनाने लगीं।
ध्यान स्वाध्याय में लीन यह संघ है,
आर्यिका संघ में ज्ञान का रंग है।
श्रावणी मास सचमुच सफल हो गया,
पाके गणिनी शिरोमणि श्रुताभ्यास को।।5।।
बारहमासा.....

भाद्रपद मास पर्वों को ले आ गया,
जग के नर नारियों को भी यह भा गया।
शक्तितस्तप व उपदेश माता करें,
उनकी शिष्या जी उपवास बत्तिस धरें।
भाद्रपद मास सचमुच सफल हो गया,
पाके तपसी व श्रुतज्ञानि के वास को।।6।।
बारहमासा....

मास आश्विन दशहरा दिखाने लगा,
शरद ऋतु आगमन को बताने लगा।
उसकी ही पूर्णिमा ने दिया मात को,
है शरद पूर्णिमा रात्रि विख्यात वो।

आश्विनी मास सचमुच सफल हो गया,
जन्म के दिन ही माँ ने लिया त्याग को।।7।।
बारहमासा.....

मास कार्तिक सुहाना समय आ गया,
पर्व दीपावली का समां छा गया।।
मात श्री वर्षायोग समापन करें,
आर्यिका के व्रतों का सुपालन करें।
कार्तिकी मास सचमुच सफल हो गया,
प्राप्त कर वीर निर्वाण नव आस को।।8।।
बारहमासा.....

मास मगशिर विवाहोत्सवी मास में,
नव वधू लाल मेंहदी रचें हाथ में,
ज्ञानमति मात की लेखनी चल रही,
ज्ञान की ज्योति उनके हृदय जल रही।
मास मगशिर भी सचमुच सफल हो गया,
प्राप्त कर ज्ञानमति मात सी मात को।।9।।
बारहमासा.....

पौष में बर्फ सी ठण्ड पड़ती सदा,
जग के प्राणी विषय भोगते सर्वदा।
हस्तिनापुर से जंगल की सर्दी में भी,
ज्ञानमति माताजी सर्वदा खुश रहें।
पौष का मास सचमुच सफल हो गया,
पाके सुकुमारिका के अजब त्याग को।।10।।
बारहमासा.....

माघ महिना भी टपका रहा शीत को,
ज्ञान बिन जो मनुज होते भयभीत वो।
ज्ञान की ले बसन्ती हवा मात श्री,
ज्ञान आराधना में सदा लीन भी।
माघ का मास सचमुच सफल हो गया,
जिसने पाया बसन्ती सुधा प्यास को।।11।।
बारहमासा.....

मास फाल्गुन गुलालों के संग आ गया,
सबपे होली के मौसम का रंग छा गया।
ज्ञान पिचकारी से होली खेलें वे भी,
ज्ञानमति नाम सार्थक करें मात श्री।

फाल्गुनी मास सचमुच सफल हो गया,
प्राप्त कर आर्यिका ब्राह्मी सी मात को।।12।।
बारहमासा....

''चन्दनामति'' ने यह बारहमासा रचा,
देखकर जिनने जीवन स्वयं मात का।
वीर निर्वाण पच्चीस सौ उन्नीस में,
माघ कृष्णा त्रयोदशि की रचना है ये।
सारी ऋतुएं भी माँ के चरण झुक नई,
दीर्घकालिक तपस्या की ले आश को।।13।।
बारहमासा.....

इसको पढ़ करके चिन्तन मनन जो करे,
बारहों मास अपने सफल वो करे।
ग्रीष्म, वर्षा, शरद, शिशिर, हेमन्त में,
ऋतु बसन्तादि ये षट् जो प्राणी सहें।
मेरा जीवन बने ज्ञानमति मात सम,
मेरी रचना में भी इक यही आश हो।।14।।
बारहमासा.....

मंगल आरती

तर्ज-चांदनपुर के गाँव में बुला ले सांवरिया.....

घृत दीपक का थाल ले, उतारूँ आरतिया,
मैं तो पाँचों परमेष्ठी की।
पाँचों परमेष्ठी की एवं चौबीसों जिनवर की।।
घृत दीपक.।।टेक.।।

समवसरणयुत अरिहंतों की, सिद्धशिला के सिद्धों की-2
भवदुख नाशन हेतु ही, उतारूँ आरतिया,
मैं तो पाँचों परमेष्ठी की।।1।।

परमेष्ठी आचार्य उपाध्याय साधु मोक्षपथगामी है-2
रत्नत्रय की प्राप्ति हित, उतारूँ आरतिया,
मैं तो पाँचों परमेष्ठी की।।2।।

मुनिवर ही तो कर्म नाश, अरिहंत-सिद्ध पद पाते हैं-2
कर्म विनाशन हेतु ही, उतारूँ आरतिया,
मैं तो पाँचों परमेष्ठी की।।3।।

चौबीस जिन जहाँ जन्मे एवं जहाँ से मोक्ष पधारे हैं-2
उन सब पावन तीर्थ की, उतारूँ आरतिया,
मैं तो पाँचों परमेष्ठी की।।4।।

देव-शास्त्र-गुरू तीनों जग में, तीन रतन माने हैं-2
आतम निधि के हेतु ही, उतारूँ आरतिया,
मैं तो पाँचों परमेष्ठी की।।5।।

तीन लोक के जिनमन्दिर, कृत्रिम-अकृत्रिम जितने हैं-2
उन सबकी ''चंदनामती'', उतारूँ आरतिया,
मैं तो पाँचों परमेष्ठी की।।6।।

पाँचों परमेष्ठी की एवं चौबीसों जिनवर की-2
घृत दीपक का थाल ले, उतारूँ आरतिया,
मैं तो पाँचों परमेष्ठी की।।7।।